चन्दामामा
दिसम्बर १९७७

लूटो जेम्स का मज़ा
जीतने के लिए, १००१ मज़ेदार पुरस्कार!
क्या बता सकते हो कि इनमें कौन सा चित्र असमान है?
1
2
3
4
5
Cadbury's
MILK CHOCOLATE
GEMS
जल्दी करो! अपना उत्तर, कॅड्बरिज़ जेम्स के एक खाली प्लास्टिक पैकेट के साथ भेजो। पहले १००१ सफल प्रतियोगियों को ११ रुपये मूल्य का स्टेट बैंक गिफ्ट चेक मिलेगा।
अपना उत्तर, नाम और पते के साथ केवल अंग्रेजी में और बड़े (ब्लॉक) अक्षरों में लिखो।
प्रवेश-पत्र इस पते पर भेजो:
"लूटो जेम्स का मजा" डिपार्टमेंट F-21
पोस्ट बॉक्स नं. ५६, थाने ४००६०१
प्रवेश-पत्र पहुंचने की अंतिम तिथि:
31-12-1977
चॉकलेट से भरे रंगीन कॅड्बरिज़ जेम्स
CHAITRA-C-69 HIN
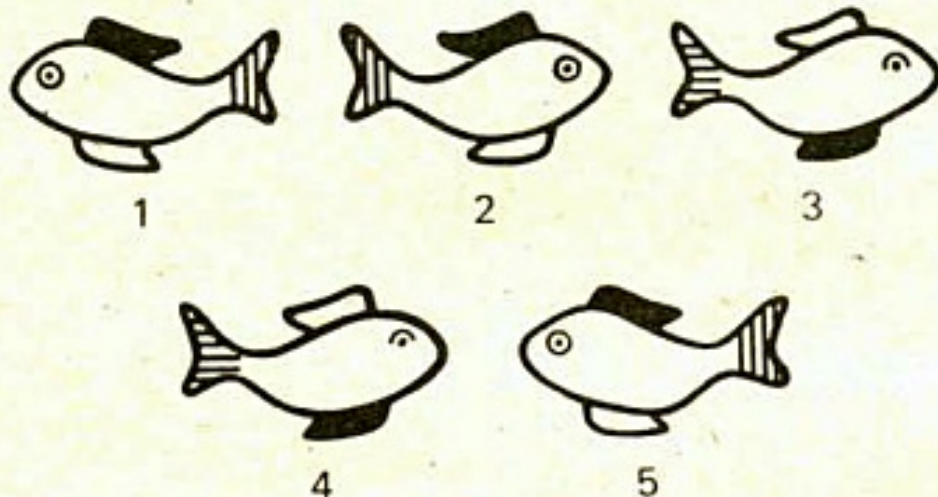
चन्दामामा

दिसंबर १९७७

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor : NAGI REDDI. CHANDAMAMA is published monthly and distributed in U.S.A. by Chandamama Distributors, West Chester PA 19380. Subscription 1 year $ 6-50. Second Class Postage paid at West Chester, PA.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "दरिद्र की वाणी" है!

यों तो अंधविश्वास स्वार्थ और भय के कारण उत्पन्न होते हैं। व्यक्तियों की असहायता इसका कारण है। शासन जब अत्यंत क्रूर होता है, तब उसका सामना करने की क्षमता न रखनेवाली प्रजा यही सोचती है कि भगवान ने ही ये कष्ट उन्हें दिये हैं। सच बात तो यह है कि जो लोग शासक की निंदा करने से डरते हैं, वे भगवान की निंदा करने से नहीं डरते। इसी प्रकार अपनी शक्ति के द्वारा जो हित नहीं होता वह किसी भिखारी की वाणी से होता है तो उसके भीतर महिमा देखते हैं।

वर्ष : ३० | दिसंबर १९७७ | अंक : ४

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

हर्षः, कामश्च, दर्पश्च,
धर्माः, क्रोध, श्शमो, दमः
अर्था देतानि सर्वाणि
प्रवर्तन्ते...... ॥ १ ॥

[संतोष, काम, अभिमान, धर्म, क्रोध, शांति, दांति—ये सब धनी के लिए ही शोभा देते हैं।]

पीड़ाकर ममिश्राणाम्
यत्स्यात् कर्तव्यमेव तत् ॥ २ ॥

[शत्रु के लिए जो पीड़ादायक है, वह सब करने योग्य है।]

अयुध्यमानम्, प्रच्छन्नम्
प्रांजलिम्, शरणागतम्,
पलायंतम्, प्रमत्तम् वा,
न त्वं हंतु मिहार्षसि ॥ ३ ॥

[जो युद्ध के लिए तैयार न हो, जो छिपे हो, जो प्रणाम करते हो, जो शरण में आये हो, जो भाग रहे हो और जो असावधान हो, (तुम) उसे मत मारो।]

न रणे शक्यते जेतुम्
विना युद्धेन वाग्भलात् ॥ ४ ॥

[युद्ध में डटकर लड़ना है, बातों से नहीं।]

सूक्तियाँ

काकोलूकीयम

[५३]

संध्या तक अरिमर्दन अपने अनुचरों के साथ कौओं का शिकार खेलने के लिए बरगद के पास आया और बोला– "सुनो भाइयो, राजा तथा प्रमुख व्यक्तियों के बीच मनमुटाव हो गया है, इसलिए वे लोग यहाँ से जाने के प्रयत्न में हैं। अतः मेरा ख्याल है कि हम लोगों को ज्यादा दुश्मन से सामना करना न पड़ेगा।"

इसके बाद उल्लू अट्टहास के साथ बरगद पर टूट पड़े। पर उस वृक्ष पर एक भी कौआ न था। उन्हें पेड़ के नीचे घायल हो क्षीण स्वरवाला स्थिरजीवी दिखाई दिया। उल्लू उसे मारने को आगे बढ़े, इस पर स्थिरजीवी बोला– "मुझे मारो मत। अपने राजा के पास ले जाओ। उनको बहुत-सी बातें बतानी हैं!"

उल्लुओं ने आकर अरिमर्दन को यह बात बताई, अरिमर्दन स्थिरजीवी के पास उड़कर आया। उसने पूछा–"सुनो महाशय, तुम तो कौओं के राजा हो। इस प्रकार घायल हो यहाँ पर क्यों पड़े हुए हो?"

स्थिरजीवी ने यों उत्तर दिया–"राजन, सुनो। कल उस दुष्ट मेघवर्ण ने तुम्हारे उल्लुओं की गुफ़ा पर हमला करने का प्रयत्न किया, इसका कारण बताया कि तुमने अनेक कौओं को मार डाला है। इसलिए वह इसका बदला लेना चाहता है, पर मैंने उसे समझाया कि इस तरह बलवानों से दुश्मनी मोल लेना उचित नहीं है, तुम उनके साथ समझौता करके कौओं की जाति को बचाओ! ये बातें सुन वह मुझ पर नाराज़ हो उसने मुझे घायल बनाया। आखिर यह कहकर वह

सपरिवार हिरणों के पहाड़ पर चला आया कि तुम राजद्रोही हो, अपने मित्र उल्लुओं के साथ ही रह जाओ।"

इस पर अरिमर्दन ने कहा–"वह तो मूर्ख है। उसने तुम्हारे साथ यह जो अन्याय किया है, इसके बदले में मैं कौओं का सर्वनाश करके बदला लूंगा।"

"राजन! मैं तुम्हारी शरण में आ गया हूँ, आज से मैं तुम्हारे प्रति विश्वासपात्र बन कर रहूँगा। मैं तुम्हें उस दुष्ट के निवास तक ले जाकर कौओं का सर्वनाश करने में तुम्हारी मदद करूँगा।"

इसके बाद अरिमर्दन ने अपने मंत्री रक्ताक्षि, क्रूराक्ष, दीपाक्ष, वक्रनास तथा प्राकारकर्णों से परामर्श किया कि स्थिरजीवी से हमें मदद लेनी है या नहीं?

पहले अरिमर्दन ने रक्ताक्षि की सलाह माँगी। उसने कहा–"आप उस कमबख्त स्थिरजीवी को मारकर फेंक दीजिए। इस वक़्त वह घायल होकर दुर्बल है। अगर वह अपनी ताक़त को फिर से प्राप्त कर सका तो उड़कर चला जाएगा और वह हमारे लिए एक जटिल समस्या बन सकता है। जिस प्रकार ब्राह्मण के पुत्र का वध करके, ब्राह्मण ने स्वार्थवश समझौते का जो प्रयत्न किया, उसे अस्वीकार करनेवाले साँप की भांति आप भी इसकी सलाह और सहयोग को अस्वीकार कीजिएगा।"

"वह कैसी कहानी है?" अरिमर्दन ने पूछा। इस पर रक्ताक्षि ने "ब्राह्मण और साँप" की कहानी यों सुनाई :

"हरिदत्त नामक एक ब्राह्मण था। उसके अधीन में थोड़ी-बहुत ऊसर जमीन थी। उसमें जो फसल होती, वह उसके परिवार के लिए पर्याप्त न थी। एक दिन वह अपने खेत का पहरा देते हुए एक पेड़ की छाया में ऊँघने लगा। उसने आँखें खोलने पर देखा कि एक बांबी में से एक भयंकर नाग बाहर निकल रहा है।

साँप को देख हरिदत्त ने सोचा– "ओह! यह तो मेरे खेत का अधिष्टाता

देवता है। मैंने इसकी आराधना नहीं की, इसी कारण से दारिद्रय मेरा पीछा कर रहा है!" यों सोचकर वह एक मटके में दूध ले आया। बांबी के पास दूध रखकर प्रार्थना की–"नागराज, मैं दरिद्रता से पीड़ित हूँ। मुझ पर अनुग्रह करो।"

साँप ने प्यार से सारा दूध पी लिया। दूसरे दिन हरिदत्त ने देखा कि मटके में एक सोने का सिक्का है। उसने सोचा कि उसने साँप को जो दूध पिलाया है, उसका उपहार है।

इसके बाद वह रोज साँप को मटके भर दूध पिलाता, उसकी पूजा करता, सोने का एक सिक्का लेकर लौट जाता।

एक बार हरिदत्त को पड़ोसी गाँव में ज़ाना पड़ा, इसलिए साँप को दूध पिलाने का काम अपने पुत्र को सौंप दिया।

ब्राह्मण के पुत्र ने सोचा–"बांबी में असंख्य सोने के सिक्के होंगे। यह कमबख्त साँप एक एक करके सोने का सिक्का दे रहा है।" यों सोचकर उसने साँप को मार डालना चाहा। साँप जब दूध पीने लगा, तब उसने साँप के सिर पर लाठी दे मारी। इसके बाद वह बांबी को खोदकर सारा सोना एक साथ ले जाना चाहता था। मगर साँप चोट खाने से बच गया, मारे क्रोध के ब्राह्मण के पुत्र को डसकर उसे मार डाला। ब्राह्मण ने गाँव से लौटकर यह खबर सुनी। अपने पुत्र की अंत्येष्टि क्रियाएँ करके साँप के पास दूध ले गया और बोला–"नागराज! इसमें आप का कोई दोष नहीं है। आप को मारने जाकर मेरे लड़के ने खुद अपनी मौत मोल ली है।"

इस पर साँप ने कहा–"हे ब्राह्मण! मैंने जब आप के पुत्र को मार डाला, तभी हम दोनों की मैत्री जाती रही। इसलिए आप मेरे साथ स्नेह नहीं कर सकते, आप के पुत्र का शव हम दोनों के बीच शाश्वत रूप से रोड़ा बनकर रहेगा। इसलिए आप अपने रास्ते चले जाइए। मैं भी इस बांबी को छोड़ जा रहा हूँ।"

१९१. तीन हजार वर्ष का इतिहास

बीरूट की इन शिलाओं पर ३,००० वर्षों का इतिहास अंकित है। ईजिप्ट, असीरिया, ग्रीस, रोम, फ्रान्स वगैरह अनेक देशों की सेनाएँ इस ओर से गुजरी हैं। कुछ लोगों ने प्रतिमाओं तथा शिला लेखों को भी खुदा है, निम्नलिखित अस्पष्ट प्रतिमा ई. पू. ९वीं शती के असीरिया के राजा तृतीय अमर नाजिरपाल की बताई जाती है।
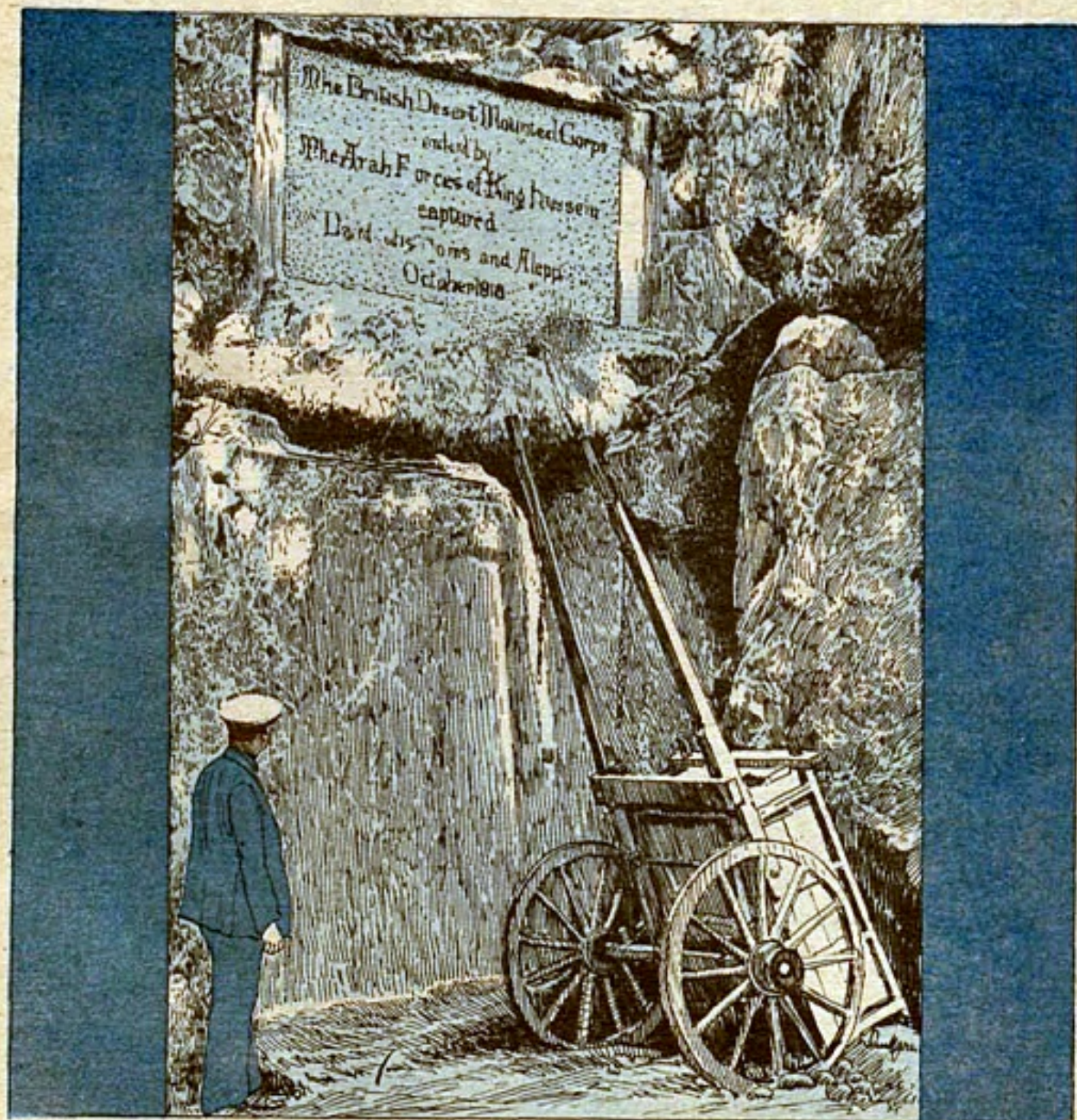
माया सरोवर

[२३]

[जयशील तथा सिद्धसाधक को नदी के पुल के निकट मकरकेतु के साथ देवशर्मा भी दिखाई दिये। उसी वक्त हंसों से जुता एक रथ आकर नदी में उतरा। उस रथ से फिसल कर माया सरोवरेश्वर तथा कांचनमाला एक जंगल में गिर गई थीं. उनकी रक्षा के संबंध में वे लोग सोच ही रहे थे, तभी राक्षसों ने रथ पर आक्रमण किया। बाद-]

हंसों से जुते रथ को जब जलवृक राक्षसों ने घेर लिया, तब उस दृश्य को देख जयशील ने दूर फेंकी गई अपनी तलवार को झट हाथ में लिया और बोला-"ओह! ये ही जलवृक राक्षस हैं? अरे इनके सिर तो देखने में भेडियों के बराबर हैं और बदन मानव के जैसे लगते हैं! ये तो बड़े ही विचित्र प्राणी मालूम होते हैं।"

उस दृश्य को देखते ही मकरकेतु अपने शूल को उठाये व्यग्रता के साथ नदी की ओर बढ़ा, फिर रुक कर जयशील से बोला-"जयशील! ये जल वृक राक्षस हंसों के रथ पर क़ब्ज़ा करना चाहते हैं; उनका अंत करने के लिए क्या तुम हमारी मदद नहीं कर सकते?"

जयशील ने इतमीनान से अपनी तलवार को म्यान में रखते हुए कहा-"सुनो, हमारे

राजा कनकाक्ष के बच्चों को तुम्हारे माया सरोवर का राजा अपहरण करके ले गया है। उन बच्चों की रक्षा करने की जिम्मेदारी मुझ पर है, साथ ही इस दुष्टता के लिए मैं तुम्हारे राजा से बदला भी लेना चाहता था। इस वक़्त हंसोंवाले रथ में तुम्हारा राजा दिखाई नहीं दे रहा है, यह उस के लिए भाग्य की बात समझो।"

यह उत्तर सुनकर मकरकेतु चकित हुआ और देवशर्मा से बोला—"वैद्यदेव! मैंने कल्पना तक नहीं की थी कि जयशील हमारे साथ ऐसी गहरी दुश्मनी रखते हैं। आपने स्वयं देखा है कि माया सरोवरेश्वर ने राजकुमार और राजकुमारी की किसी प्रकार की हानि नहीं की, बल्कि वे कितने प्रेम और वात्सल्य के साथ उनका पालन-पोषण कर रहे हैं। ये तो उन्हें गलत समझ रहे हैं।"

"जयशील! मेरी बात सुनो। तुम पहले अपने म्यान से तलवार निकालो। सरोवरेश्वर के साथ बदला लेने का यह वक़्त नहीं है।" देवशर्मा ने समझाया।

फिर क्या था, जयशील ने दूसरे ही क्षण अपने म्यान से तलवार खींच ली। उसकी देखादेखी उसी समय सिद्धसाधक भी "जय महाकाल" पुकारते उछल कर नर वानर पर सवार हुआ। पलक मारने की देरी थी कि सब लोग भयंकर गर्जन करते नदी में कूद पड़े और जलवृक राक्षसों का सामना किया।

इस बीच हंसों के रथ में स्थित अंग रक्षक जल राक्षसों से रथ को बढ़ाते इधर-उधर दौड़ाने लगा। हाथी जलग्रह पर सवार हो शूल घुमते हमला करने को तैयार मकरकेतु तथा नर वानर पर स्थित सिद्धसाधक को देख जल राक्षस घबरा गये। वे लोग भाग जाने के विचार से जल में डुबकी लगाने को तैयार हुए, तभी मकरकेतु द्वारा उकसाया गया जलग्रह उन्हें अपनी सूंड में दबा कर नदी के किनारे फेंकता गया।

जयशील पानी में तैरते हुए जो भी दुश्मन हाथ में आया, काटता गया।

एक घड़ी के अन्दर थोड़े जल राक्षस मर गये, अनेक लोग घायल हो पानी में न डुबकी न लगा सकने की हालत में नदी के प्रवाह में बहने लगे। जलग्रह ने जिन राक्षसों को अपनी सूंड में लपेट कर किनारे की ओर फेंक दिया था, उनकी कमर, हाथ व पैरों में मोच आ गये, जिससे वे उठकर नदी की ओर बढ़ना चाहते थे, पर संभव न हुआ। इस कारण वे मारे दर्द के कराहते हुए छटपटाने लगे।

सिद्धसाधक का नर वानर एक जल राक्षस को अपने दोनों हाथों में दबोच कर साधक के साथ उसे भी नदी के जल से बाहर उठा लाया। उसके पीछे मकरकेतु, सर्पनख और सर्पस्वर किनारे पर आ पहुँचे। पर जयशील हंसों के रथ पर सवार हो अंगरक्षक की ओर तलवार का निशाना करके उसे धमकी देते हुए बोला—"अबे सरोवरेश्वर के अंगरक्षक! तुम चुपचाप इस रथ को किनारे की ओर ले चलो। रथ के साथ अगर तुमने आकाश में उड़ जाने की कोशिश की तो याद रखो, तुम्हारा सिर धड़ से अलग हो जाएगा। सावधान!"

ये बातें सुन अंगरक्षक ने अपनी आँखें लाल-पीली करके कहा—"जानते हैं, मैं कौन हूँ? महान शक्तिशाली माया सरोवरेश्वर

का मैं अंगरक्षक हूँ। आज तक इस प्रकार किसीने यों मेरा अपमान करने की धृष्टता नहीं की। इसका फल आप लोगों को अभी भोगना पड़ेगा।"

"मैं वही धृष्टता करने जा रहा हूँ। लो, हाथ में तलवार!" यों कहकर जयशील ने अपनी तलवार नीचे रख दी, अपने बायें हाथ से अंगरक्षक की गर्दन पकड़ कर मरोड दी। अंगरक्षक छटपटाते हुए कराह उठा–"आप तो बड़े साहसी और शक्तिशाली मालुम होते हैं! बलवान भी हैं। मेरी गर्दन छोड़ दीजिए।"

जयशील अपनी पकड़ ढीली करके बोला–"तुम अब चुपचाप अपने रथ को नदी के किनारे ले चलो। तुम्हारे मालिक के संबंध में बहुत सारी बातें करनी हैं।"

अंगरक्षक ने चुपचाप हंसों को हांक कर रथ को किनारे लगा दिया। रथ के किनारे लगते ही सिद्धसाधक उत्साह में आकर अपने नर वानर से कूद पड़ा। वानर के हाथों में जकड़े कांपनेवाले जल राक्षस के दोनों कान पकड़ कर नीचे उतरा, तब बोला–"अरे कमबख्त! तुमने भागने की कोशिश की तो तुम्हारी गर्दन उड़ा दूंगा।" यों चेतावनी दे हंसो के रथ के पास जाकर बोला–"जयशील! मैं इस रथ पर नर वानर के साथ हिमालयों में जाकर तपस्या करना चाहता हूँ। क्या यह हम दोनों को ढो सकता है?"

जयशील ने इस अटपटी सवाल को सुन मुस्कुराते हुए रथ में स्थित अंगरक्षक की ओर देखा। अंगरक्षक रथ के पहिये को अपनी आँखों से लगा कर बोला–"महाशयो! यह अत्यंत महिमान्वित है। इसमें जुते हंस केवल इसकी शोभा बढ़ाने के लिए ही। यदि हमारे सरोवरेश्वर चाहेंगे तो यह चौदहों भुवनों की परिक्रमा करके मिनटों में वापस लौट सकता है। मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ; मेरी बातों पर यक़ीन कीजिए।"

"ओह! ऐसी बात है? ऐसी महिमावाला यह रथ गीधों के हमले से क्यों उलट गया है? उस वक़्त तुम्हारे वह सरोवरेश्वर भी तो रथ पर थे न? बकवास बंद न करोगे तो तुम्हें शूल में चुभो कर नदी में फेंक दूंगा।" इन शब्दों के साथ सिद्ध साधक ने अंगरक्षक को सावधान करते हुए उसकी ओर शूल बढ़ाया।

जयशील ने उसे शांत होने का आदेश देकर समझाया–"सिद्धसाधक! रथ पर से जंगल में न केवल सरोवरेश्वर ही गिरा, बल्कि हिरण्यपुर की राजकुमारी कांचनमाला भी तो गिर पड़ी है। तुम कदापि यह बात मत भूलो।"

मकरकेतु ने चितापूर्ण स्वर में कहा–"जयशील! हमारे राजा सरोवरेश्वर को खोज-ढूढ़ कर उनकी रक्षा करने के लिए हम इन हंसों के रथ पर रवाना हो रहे हैं। न मालूम वे कैसी विपदा में फंसे हुए हैं।"

"हम भी रवाना हो रहे हैं। हमें भी राजकुमारी कांचनमाला का पता लगाना है। अगर किसी कारणवश वह किसी भयंकर खतरे का शिकार हो गई हो, तो उसकी पूरी जिम्मेदारी तुम्हारे राजा की होगी। हम तुम्हारे राजा का सिर राजा कनकाक्ष को भेंट देने जा रहे हैं।" जयशील ने कहा।

देवशर्मा अब तक सर झुकाये विचार मग्न था, जयशील की बातें सुन उसने झट से सर उठा कर कहा–"जयशील! मैंने इसके पूर्व ही बताया है कि यह बदला लेने का वक़्त नहीं है। हमें तुरंत यहाँ से रवाना होकर माया सरोवरेश्वर तथा कांचनमाला का पता लगाना है।"

"जी हाँ! आप ठीक कहते हैं। माया सरोवरेश्वर की बात तो मैं नहीं जानता, पर कांचनमाला का पता लगाना मेरे तथा सिद्धसाधक के लिए अत्यंत ही जरूरी है। भाई सिद्धसाधक! क्या हम अब चले?" जयशील ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

सिद्धसाधक ने एक बार चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ाई, तब संदेहपूर्ण स्वर में कहा–"ऐसे भयंकर जंगल में उनका पता कैसे लगावे ?"

सिद्धसाधक के ये शब्द सुनकर हंसों के रथ से अंग रक्षक किनारे उतर पड़ा, सिद्धसाधक की ओर बढ़ते नर वानर की तीक्ष्ण दृष्टि देख सहम गया, दो-चार क़दम पीछे हट कर बोला–"महाशयो, हमारे राजा तथा कांचनमाला जंगल में जिस स्थान पर गिर गये हैं, उस स्थान को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। उस प्रदेश के निकट ही एक पहाड़ है और आसमान को छूनेवाले महान वृक्ष हैं। एक स्थान पर खाली मैदान है। वहाँ पर सफ़ेद धुआँ आसमान में फैल रहा था।"

"ओह, यह बात है! हम लोग अंगरक्षक की मदद से वहाँ तक पहुँच सकते हैं। अब सब लोग रथ पर सवार हो जाइए।" ये शब्द कहते देवशर्मा रथ की ओर बढ़ा।

"वैद्यदेव! क्या रथ में सभी लोगों को स्थान मिलेगा? सिद्धसाधक और उसके वाहन की बात क्या होगी? क्या मकरकेतु अपने वाहन के साथ आसमान में उड़ कर हमारा अनुसरण करेगा?" जयशील ने पूछा।

देवशर्मा ने सब लोगों की तरफ़ एक बार दृष्टि दौड़ा कर कहा–"जिन लोगों के पास वाहन हैं, वे लोग अपने-अपने वाहनों पर चले आवे! क्यों सिद्धसाधक और मकरकेतु? ठीक है न?"

मकरकेतु ने सिद्धसाधक की ओर देखा। सिद्धसाधक दांत मींचते मकरकेतु की ओर तीक्ष्ण दृष्टि दौड़ा कर बोला–"हम लोग आपके साथ उसी वेग के साथ उस स्थान पर पहुँच सकते हैं, मगर रास्ते में अगर मकरकेतु ने मुझे धोखा देने की कोशिश की तो मैं इसे अपने नर वानर का आहार बना डालूँगा।"

"सिद्धसाधक! नाराज़ मत होओ। इस वक़्त हम सब मित्र हैं।" मकरकेतु ने हंसने का व्यर्थ प्रयत्न करते हुए कहा।

"यह बात मैंने तुम्हारे मुंह से कई बार सुनी है। जब तक राजा कनकाक्ष के बच्चे सुरक्षित हमें प्राप्त न होंगे, तब तक तुम्हारे माया सरोवर के दल के लोग हमारे दुश्मन ही होंगे।" सिद्धसाधक ने कहा।

इसके बाद सिद्धसाधक और मकरकेतु को छोड़ बाक़ी सब लोग हँसों के रथ पर सवार हुए। अंगरक्षक ने उन दोनों को मार्ग बताते हुए कहा—"एक ऊँचा पहाड़ और आकाश को छूनेवाले महावृक्षों को याद रखो।"

फिर क्या था, हँसों का रथ आसमान में उड़ा, देखते-देखते वह आँखों से ओझल हो गया। तब सिद्धसाधक नर वानर के कंधों पर उछल कर बैठ कर बोला—"मकरकेतु, अब चलो, विलंब न करो।"

मकरकेतु सर हिला कर जलग्रह पर सवार हो गया। उस समय सिद्धसाधक के हाथ बन्दी बने जलवृक राक्षस गिड़गिड़ा कर बोला—"महान वीर! मुझे आप अपने सेवक के रूप में अपने साथ ले जाइए। आज से मैं आप का सेवक हूं।"

ये शब्द सुन सिद्धसाधक फूला न समाया और बोला—"अरे जलवृक राक्षस! तुमने खूब कहा। लेकिन क्या तुम मेरे नर वानर के साथ उसी गति से चल सकते हो?"

"मालिक! मेरे पंख नहीं हैं, फिर भी मैं ज़मीन पर पक्षी जैसे वेग के साथ दौड़ सकता हूँ।" जल राक्षस ने कहा।

"वाह रे सेवक! तुमने लाख टके की बात कही।" इन शब्दों के साथ सिद्धसाधक ने जल राक्षस का कंधा थपथपाया और नर वानर को हांकने को हुआ, तभी नाटी जाति का सेनापति अपने थोड़े से अनुचरों के साथ भेड़ों के वाहनों पर वहाँ पर आ पहुंचा।

"अहो! वीर नाटी जाति के सेनापति! क्या खबर लाये हो?" सिद्धसाधक ने पूछा।

नाटी जाति का सेनापति नदी के किनारे घायल हो छटपटानेवाले जलवृक राक्षसों की ओर संकेत करके बोला—"सरकार! यहाँ पर जो कुछ हुआ, उसे मैंने टीले की आड़ में खड़े हो देखा। इन भेड़ियों के सिरवाले मानवों के साथ कैसा बर्ताव करूँ? बिना इनका इलाज कराये ऐसा ही मरने देना न्याय संगत नहीं है न?"

"तुमने बड़ी अच्छी बात बताई। उन दुष्टों का इलाज कराकर ही उन्हें परलोक में भेज दो। मगर खबरदार! थोड़ी ताक़त पाकर ये लोग शायद तुम लोगों को पकड़कर खा डाले।" सिद्धसाधक ने सचेत किया।

सिद्धसाधक की बात पूरी होने के पूर्व ही नाटी जाति का सेनापति नदी के उस पारवाले जंगल की ओर विस्मयपूर्ण दृष्टि दौड़ा कर बोला—"मालिक! उधर देखिये तो! आसमान को छूनेवाला वह सफ़ेद धुआँ कैसा? क्या जंगल तो जल नहीं रहा है न?"

"अबे, जंगल नहीं जल रहा है। उस धुएँ का कारण बननेवाले माया सरोवर नामक दुष्ट आदमी का शरीर जल रहा है। हे नर वानर, उस धुएँ की दिशा में वायु वेग के साथ दौड़ो।" यों कहकर सिद्धसाधक ने नरवानर को हांक दिया।

नरवानर जंगल के गूंजने लायक एक बार दहाड़ उठा, तब चल पड़ा। उसके पीछे जलवृक राक्षस तथा जलग्रह पर सवार मकरकेतु भी चल पड़े। (अभी है)
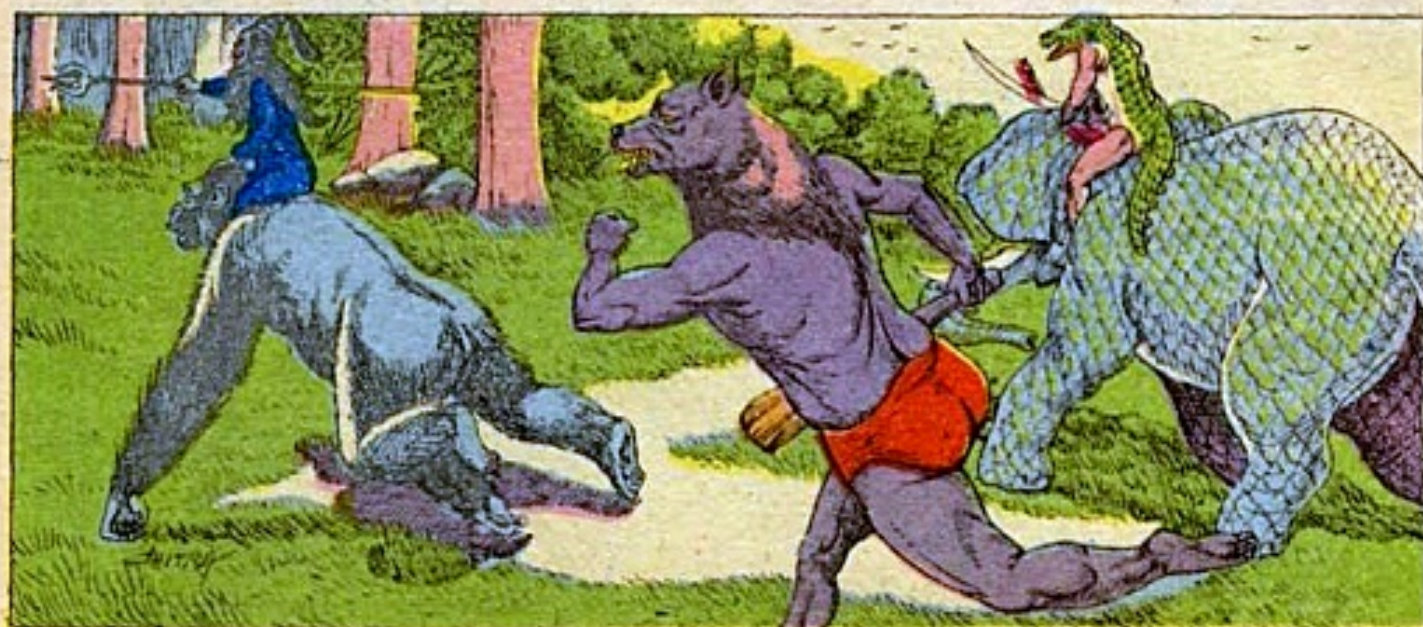
दरिद्र की वाणी

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर, कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, यदि आप महान शक्तियाँ प्राप्त करने के ख्याल से इस प्रकार श्रम उठा रहे हैं तो यह सोचकर भयभीत न होइएगा कि ऐसी शक्तियाँ केवल तपस्या और योग द्वारा ही प्राप्त होती हैं। ऐसी शक्तियाँ एक अत्यंत दरिद्र के भीतर भी हो सकती हैं। इसके उदाहरण स्वरूप में आपको एक लखपति के जीवन को पूर्ण रूप से बदलनेवाली एक दरिद्र की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा : एक गाँव में एक दरिद्र रहा करता था। उसके अपना कहनेवाला कोई न था। वह प्रति दिन

बेताल कथाएँ

अपनी पत्नी से इसे खाने को कह दीजिए। एक साल के अन्दर वह एक बच्चे का जन्म देगी।"

संतान पाने के लिए लखपति सबके आशीर्वाद पाने को तैयार था, इसलिए उसने वह केला अपनी पत्नी के हाथ देकर उसे खाने को कहा। फिर क्या था, एक साल के अन्दर उस स्त्री ने एक बच्चे का जन्म दिया। लखपति ने सोचा कि यह तो उस दरिद्र की महिमा का प्रभाव है। उसने फिर से शिवाले में आकर दरिद्र के दर्शन किये।

दरिद्र ने लखपति से पूछा-"क्यों जी, आपके घर का बच्चा रो रहा है न?"

लखपति ने दरिद्र की प्रशंसा करते हुए कहा-"महाशय, आपकी महिमा के कारण मेरे एक पुत्र हुआ है। आप जो भी माँगेंगे, मैं अपनी शक्ति के बल पर देने को तैयार हूँ। आप कोई न कोई चीज़ ज़रूर माँग लीजिएगा।"

"वैसे मुझे कुछ नहीं चाहिए, पर आप एक काम कीजिए। आपने अन्यायपूर्वक जनता की संपत्ति बटोर कर उन्हें दरिद्र बनाया, चोर बाजारी की, हद से ज्यादा ब्याज लिया, झूठे दस्तावेजों की सृष्टि की, इस तरह के सारे काम आज से बंद कर दीजिए। तब आपका पुत्र सकुशल रहेगा।

उसी गाँव के एक तालाब में स्नान करता और बगल में स्थित शिवाले में पहुँच जाता। शिवाले में आनेवाले भक्त रोज उसे नारियल के टुकड़े, केला और छुट्टे पैसे दे देते। जो कुछ मिलता, उसे खा लेता, मगर कभी वह दूसरों के आगे हाथ पसार कर याचना न करता था।

एक दिन एक लखपति अपनी पत्नी के साँथ शिवजी की अर्चना कराने आया। उसके कोई संतान न थी। लखपति ने दरिद्र के आगे एक केला फेंक दिया। दरिद्र ने केला हाथ में उठाया, थोड़ी देर तक सोचता रहा, पुनः उसे लखपति के हाथ लौटाते हुए बोला-"महाशय, आप

वरना इसका फल आपको भोगना पड़ेगा।" दरिद्र ने समझाया।

लखपति को लगा, मानो उसके सर गाज गिर गई हो। फिर भी उसने अपने पुत्र को सुखी देखने के ख्याल से इसके पूर्व उसने जो कुछ संपत्ति अन्यायपूर्वक जुटाई थी, उसे वापस कर दी, ज्यादा ब्याज जिन लोगों से वसूला था, उन्हें लौटा दिया, चोर बाजारी करना छोड़ दिया, न्यायपूर्वक व्यापार करने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा– "राजन, दरिद्र की वाणी में ऐसी महिमा कहाँ से आ गई? क्या इसलिए कि वह अपना सारा समय शिवाले में बिताते हुए भगवान का प्रसाद ग्रहण करता था? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया–"यह मानने के लिए कोई सबूत नहीं है कि दरिद्र की वाणी में कोई महिमा है। अगर उसकी वाणी सच होती तो गाँववाले कभी उसकी पूजा करते, लेकिन निस्वार्थ जीवन व्यतीत करनेवाले की वाणी कभी कभी सच निकलती है। लखपति के पुत्र होना भी कुछ ऐसा ही है। मगर लखपति ने उस दरिद्र के भीतर इसलिए महिमा देखी कि हज़ारों दंपति अनेक व्रत व तीर्थाटन, देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करके भी संतान प्राप्त नहीं कर पाते, आखिर किसी के हाथ का फल खाकर संतान पाते हैं। ऐसे साधू सचमुच महिमा रखनेवाले माने जाते हैं। इसी हिसाब से लखपति ने सोचा कि दरिद्र की वाणी में भी कोई महिमा है। जब उसका विश्वास जम गया तब कई साल बाद उत्पन्न पुत्र के हित के वास्ते उसे लाचार होकर अपनी जीवन-पद्धति को बदलना पड़ा।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव से साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

खूँटों के निशान

मंगल बड़ा ही नटखट लड़का था। वह हमेशा कोई न कोई नटखट का काम किया करता था। उसके पिता ने उसे डांटा, धमकाया, पीटा, पर उसे सुधार न पाया। जब भी लड़के की कोई शिकायत होती तब तब वह पूजा के मंदिर के किवाड़ पर एक एक खूंटा गाड़ता गया। थोड़े दिनों में सारा किवाड़ खूंटों से भर गया।

अचानक मंगल के चाल चलन में परिवर्तन आया। उसने बुरे काम करना बंद ही नहीं किया, बल्कि सब की सहायता करते हुए अच्छे काम करने लगा। जब जब मंगल एक अच्छा काम करता गया, तब तब उसका पिता किवाड़ पर से एक खूंटा निकालता गया। एक साल के अन्दर सारे खूंटे किवाड़ पर से निकाले गये।

अंतिम खूंटे को मंगल के पिता ने जब किवाड़ पर से निकाला, तब मंगल अपने पिता के चरणों पर गिरकर रोते हुए बोला–"पिताजी, आप ने खूंटे तो निकाले, पर उनके निशान सदा के लिए रह गये।"

"हाँ बेटा! बुरे काम छूटने पर भी उनकी बदनामी बनी रहेगी। इसलिए बुरे काम कभी करने ही नहीं चाहिए।" पिता ने जवाब दिया।

तंदुरुस्ती का राज

कुबेर नामक युवक सब तरह से संपन्न है, मगर उसकी तंदुरुस्ती हमेशा खराब रहती है। उसने अपनी तंदुरुस्ती को सुधारने के लिए अनेक प्रकार की दवाइयों का सेवन किया, मगर कोई फ़ायदा न रहा। इसलिए वह सदा दुखी रहने लगा।

कुबेर का चरक नामक एक मित्र था। एक बार वह किसी काम से कुबेर के घर आया; दो-चार दिन वहीं टिक गया। चरक ने अपने मित्र की तंदुरुस्ती के बारे में पूछा। वैसे चरक कोई बड़ा वैद्य न था, पर दवाइयों के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी रखता था। उसने कुबेर की जांच करके पता लगाया कि उसके शरीर के भीतर कोई बीमारी नहीं है। इस पर उसने कुबेर की दिनचर्या के बारे में सवाल किये।

कुबेर प्रति दिन सवेरे कालकृत्यों से निवृत्त होकर नाश्ता करता था। इसके बाद वह हिसाब-क़िताब देखता। इस बीच एक बार वह फलों के रस का सेवन करता। फिर थोड़ी देर तक आराम करके खाना खा लेता। खाने के बाद वह सो जाता। नींद से जागने पर अपने कर्मचारियों के कार्य पर निगरानी करता, तब अपने पिता के साथ व्यापार तथा अन्य मामलों के संबंध में चर्चा करता। रात के भोजन के बाद सोने के पहले एक बार और फलों के रस का सेवन करता।

इस प्रकार कुबेर ने अपने दैनिक कार्यक्रम का सारा विवरण बता कर कहा– "मेरे प्यारे दोस्त चरक! मेरे शरीर के अन्दर कोई भयंकर बीमारी घर गई है। वह दवाइयों से ठीक होने की नहीं है। फलों का रस भी मुझे स्वादिष्ट मालूम

नहीं होता। इसलिए यह सोचकर मुझे चिंता सताती है कि क्या मेरी ज़िंदगी ऐसी ही बीमारियों में खतम हो जाएगी।"

इस पर चरक ने मुस्कुराकर कहा—"मित्र, तुम निराश मत होओ। तुम्हारे लिए दवाइयों के साथ जलवायु का परिवर्तन भी ज़रूरी है। महीने-भर के लिए तुम मेरे गाँव आकर वहीं रह जाओ। मेरा विश्वास है कि तुम्हारी तंदुरुस्ती बिलकुल सुधर जाएगी।"

इसके बाद कुबेर अपने पिता की अनुमति लेकर चरक के गाँव पहुँचा। उस गाँव के धनी लोग ललित कलाओं के प्रति विशेष अभिरुचि रखते थे। वहाँ पर प्रति दिन कोई न कोई मनोरंजन का कार्यक्रम चलता रहता था। वे कार्यक्रम कुबेर को बहुत ही पसंद आये। इसलिए वह प्रति दिन वे कार्यक्रम देखने के लिए लालायित रहने लगा।

कुबेर के भीतर यह नया उत्साह देख चरक बोला—"लगता है कि मेरे गाँव की जलवायु तुम्हारे लिए अनुकूल पड़ गई है। तुम्हारे भीतर मैं एक नया उत्साह देख रहा हूँ। हाँ, सुनो, कल रात को अचानक एक गोसाई से मेरी मुलाक़ात हो गई। मैंने उनको तुम्हारी बीमारी का समाचार सुनाया। उन्होंने सलाह दी कि भीलों की बस्ती के समीप में कोई जड़ीबूटी है। तुम स्वयं जाकर उस बूटी को उखाड़ कर उसका सेवन करोगे तो तुम्हारी बीमारी बिलकुल दूर हो जाएगी। अगर तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो हम दोनों अभी वहाँ पर चले चलेंगे।"

"क्या हम शाम तक लौट सकते हैं?" कुबेर ने पूछा।

"क्यों नहीं? हमारी यात्रा तो चन्द घंटों की है।" चरक ने उत्तर दिया।

इसके बाद वे दोनों मित्र जंगल में एक पगडंडी से होकर चलते गये। चरक तो तेजी से डग भरते चला जा रहा था, पर कुबेर बीच-बीच में रुक-रुक कर चलता था।

"दोस्त! तुम भी मेरी उम्र के बराबर के हो। तुम क्यों नहीं चल पाते हो?" चरक ने पूछा।

"अगर मेरी तंदुरुस्ती ठीक होती तो मैं भी तुम्हारे बराबर चल सकता था न?" कुबेर ने कहा।

"हम लोग तुम्हारी तंदुरुस्ती को सुधारने के लिए ही तो जा रहे हैं। यदि तुम जल्दी चल न पाओगे तो हम शीघ्र अपने गाँव लौट नहीं सकते!" चरक ने समझाया।

यह बात कुबेर को लग गई। वह भी मन लगा कर चरक के पीछे चलता गया। इस प्रकार दोनों काफ़ी दूर चले गये। तब चरक ने एक पौधा दिखाकर कहा—"देखो, यही वह जड़ीबूटी है। इसे तुम अपने हाथों से उखाड़ दो।"

कुबेर ने अपने दोनों हाथों से जोर देकर उस जड़ी बूटी को उखाड़ा। वह जड़ के साथ निकल आया। समीप में स्थित एक तालाब में उस जड़ी को धोकर चरक ने उसकी जड़ कुबेर को खिलाया। तब कहा—"अब हम लोग लौट सकते हैं।"

दोनों ने बड़ी दूर की यात्रा की थी। उसकी याद आते ही कुबेर का दिल बैठ गया। उल्टे उसे बड़ी भूख लगी थी।

"दोस्त! मुझे बड़ी भूख लगी है। मैं अब एक भी क़दम नहीं चल सकता। मुझे खाने को कुछ चाहिए।" कुबेर ने नीरस स्वर में कहा।

"ओह, तब तो दवा अभी से अपना काम करने लगी है। यह बात मुझे पहले ही मालूम हो जाती तो खाने के लिए कुछ साथ लाता। निकट मे ही भीलों की बस्ती है। वहाँ पर शायद खाने को कुछ मिल जाय।" चरक ने समझाया।

भीलों की बस्ती समीप में न थी। फिर भी लाचार होकर कुबेर वहाँ तक पैदल चलकर गया। भीलों के सरदार ने उनका स्वागत किया। उसी वक़्त बांस का चावल पकवाकर खिलाया। कुबेर को भूख सता रही थी, उसने भर पेट खाया।

खाने के बाद दोनों को नींद आई। भील सरदार ने उनके सोने का इंतज़ाम किया। नींद से जागकर देखा कि शाम होने को थी। रास्ते में कुबेर ने चरक से कहा—"दोस्त! तुम्हारी दवा तो कोई अद्‌भुत चीज़ है। मुझे बड़ी अच्छी नींद आ गई, साथ ही मेरी देह हल्की है।"

उस दिन रात को भी कुबेर ने भर पेट खाना खाया और गहरी नींद सो गया।

दूसरे दिन चरक ने कुबेर से कहा—"मित्रवर, अब तुम्हारी तंदुरुस्ती सुधर गई है, इसलिए मैं उसका राज बता देता हूँ। भूख लगने के लिए उपवास के अतिरिक्त कोई दूसरी दवा नहीं है। नींद आने के लिए शारीरिक श्रम के सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है। मन को प्रसन्न रखना है तो मनोरंजन के कार्यक्रमों की ज़रूरत है। अगर मैं पहले ही ये बातें समझाता तो तुम यक़ीन नहीं करते। इसलिए किसी दवा का नाम लेकर मैं तुम को यहाँ पर ले आया। आइंदा तुम भूख न लगने पर कोई भी चीज़ न खाओ। रोज़ शारीरिक व्यायाम करो।"

ये शब्द सुनकर कुबेर पहले विस्मय में आ गया। पर उन बातों की सचाई को समझ लिया। इसके बाद कुबेर अपने गाँव को लौटकर चरक की सलाह को अमल करने लगा। फिर क्या था, उसने अपने गाँव में भी मनोरंजन के कार्यक्रमों का इंतज़ाम किया।
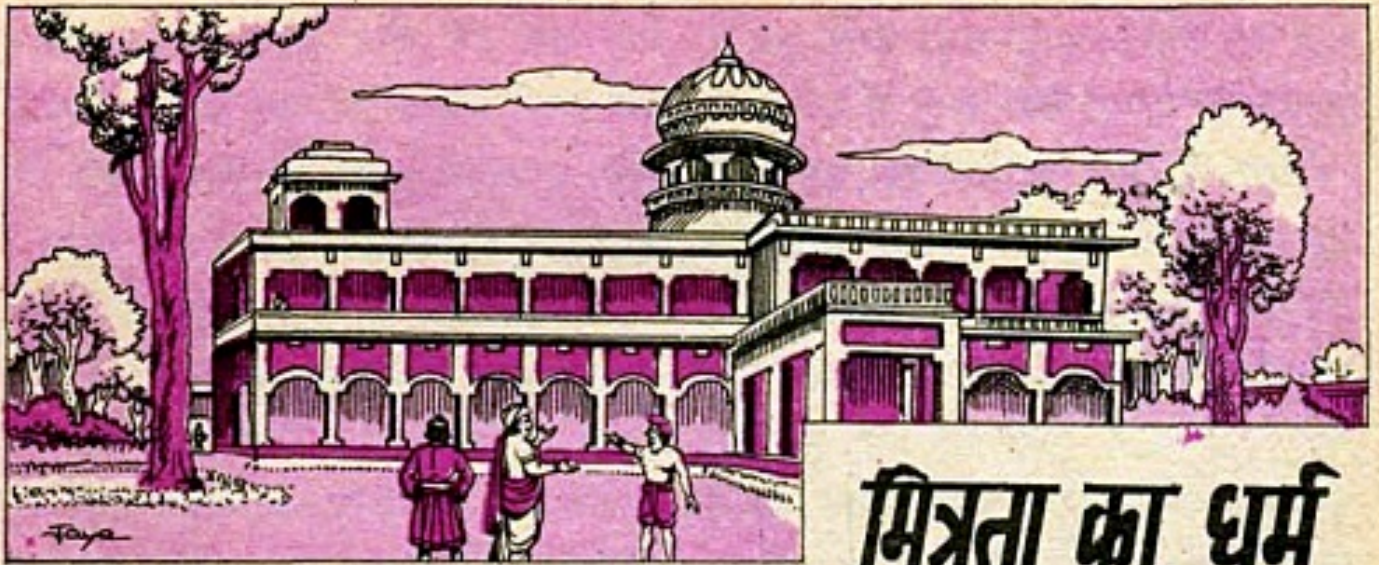
मित्रता का धर्म

भूपति के यहाँ पर्याप्त जमीन-जायदाद थी, एक बहुत बड़ा मकान भी था। उसका इकलौता पुत्र गजपति था।

एक बार पिता-पुत्र राजधानी में होनेवाला उत्सव देखने गये। दो दिन तक नगर के वैभव और उत्सव के समारोहों को देख बहुत खुश हुए। तीसरे दिन एक विशाल महल को देख पिता और पुत्र ने सोचा कि राजधानी भर में ऐसा बड़ा महल दूसरा कोई नहीं है। पूछने पर पता लगा कि वह मकान माणिक्यवर्मा नामक एक व्यापारी का है।

यह समाचार सुनते ही भूपति के मुंह से निकल पड़ा—"कहीं मेरे साथ सोना बांटनेवाले माणिक्यवर्मा का तो नहीं है यह महल?" गजपति ने अपने पिता से पूछा—"आप के साथ सोना बांटनेवाले वह माणिक्यवर्मा कौन हैं?"

भूपति ने यों उत्तर दिया—"बेटा! मैं बचपन में एकदम अनाथ था। हर किसी के घर जाकर छोटा-मोटा काम करता, वे जो कुछ देते, उसी से अपना पेट भर लेता था। माणिक्यवर्मा मेरा एक अच्छा दोस्त था। उन दिनों में गाँव के छोर पर एक उजड़ा महल था। वह एक जमींन्दार का था। उस पर गाज गिरने के कारण वह उजड़ गया। जमीन्दार के परिवार के सारे लोग मर गये, पर जमीन्दार का पिता बच गया। उस वक़्त वह गाँव में न था। लौटकर उस उजड़े मकान को देखा तो उसका मतिभ्रमण हो गया।

वह बूढ़ा थोड़े दिन ज़िन्दा रहा। कभी कभी वह गाँव में आ जाता और युवकों से चिल्लाकर पूछता—"अबे, क्या तुम लोगों को सोना चाहिए?" उसे देख नौजवान

राजीव सक्सेना

लोग डर जाते! कभी कभी बच्चे दूर से ही उस पर पत्थर फेंका करते थे।

मगर मैं और माणिक्यवर्मा हम दोनों उस पागल बूढ़े के प्रति मित्रता रखते थे। जब-तब उस उजड़े महल में जाकर बूढ़े से बातचीत किया करते थे। एक दिन वहाँ पहुँचने पर हमने देखा कि बूढ़ा मौत की घड़ियाँ गिन रहा है। हमने उसके मुँह में पानी डाला। बूढ़ा बड़बड़ाते हुए बोला– "बच्चो! सुनो! पिछवाड़े में नीम के पेड़ की जड़ के पास सोना गड़ा हुआ है। तुम लोग उसे खोदकर ले लो।" ये शब्द कहकर बूढ़े ने प्राण त्याग दिये।

थोड़े दिन बाद हम दोनों ने पेड़ की जड़ के पास खोदना शुरू किया। दस दिन तक हम लोग खोदते गये, आखिर हमें पुराने जमाने का एक कलश दिखाई दिया। उसमें सोने के सिक्के भरे थे; हमने उन सिक्कों को बराबर बांट लिया।

माणिक्यवर्मा ने अपने हिस्से का सोना बेचकर शहर में व्यापार करने का निश्चय किया। लेकिन मैंने गाँव में जाकर खेत खरीद कर अपनी ज़िन्दगी बसर करने का निर्णय कर लिया। उस दिन से फिर हम लोगों को एक दूसरे से मिलने का मौक़ा नहीं मिला।

इसके बाद बाप-बेटे माणिक्यवर्मा के घर पहुँचे। माणिक्यवर्मा ने भूपति को पहचान लिया और अपने एक नौकर को भेजकर उसे घर के अन्दर बुलवा लिया।

पिता-पुत्र सारा महल देख आश्चर्य में आ गये। उस महल के वैभव को देखने पर गजपति को अपने पिता पर बड़ा क्रोध आया। उसने कहा–"पिताजी! आप ने मेरे प्रति बड़ा अन्याय किया है। आपने भी यदि व्यापार किया होता तो हम भी इसी प्रकार वैभव पूर्ण जीवन बिता देते। मुझे हमारी ज़िन्दगी पर घृणा होती है।" ये शब्द कहकर गजपति उस महल से बाहर निकल गया।

अपने पुत्र के मुँह से ये बातें सुनने पर भूपति को बड़ा दुख हुआ। माणिक्यवर्मा ने भूपति को चिंतित देख पूछा–"दोस्त! आप क्यों परेशान मालूम होते हैं?" भूपति ने अपने पुत्र के ताने सुना दिये।

"दोस्त! यह तो नासमझी के कारण कही गयी बातें हैं! आप चिंता न कीजिएगा!" इसके बाद माणिक्यवर्मा ने भूपति को खाना खिलाकर उसके आराम करने का इंतज़ाम किया।

थोड़ी देर बाद गजपति चिंतापूर्ण वदन लिये आ पहुँचा। माणिक्यवर्मा ने उसके लिए भी भोजन का प्रबंध करके पूछा–"बेटा! तुम दुखी मालूम होते हो! बात क्या है?"

"मेरे पिताजी ने मेरे साथ बड़ा ही अन्याय किया है! उन्होंने भी अगर आपके साथ व्यापार किया होता तो हम लोग भी आपकी भांति सुख का अनुभव करते!" गजपति ने अपने मन की व्यथा प्रकट की।

माणिक्यवर्मा ने मुस्कुरा कर कहा– "सुनो बेटा! ऐसा कभी मत समझो! तुम्हारे पिता ने जो निर्णय लिया, वह भविष्य को दृष्टि में रख कर किया गया है। व्यापार का मतलब जुआ है। व्यापार में कभी गाड़ी नाव पर हो जाती है तो कभी नाव गाड़ी पर। मैंने अपने हिस्से के सोने के साथ अपने बड़े भाई से व्यापार करने को कहा। मगर उन्होंने ऐसा करना पसंद नहीं किया। मेरे हिस्से का आधा सोना लेकर उन्होंने नौका-व्यापार शुरू किया। पर जानते हो, क्या हुआ? समुद्र के बीच नौका डूब गई और सारा माल नष्ट हो गया। इसके बाद मेरे पास से थोड़ा और सोना लेकर लकड़ी का व्यापार किया। एक बार अग्निकांड में सारी लकड़ियाँ जलकर राख हो गईं। लेकिन मेरा व्यापार खूब चमका। खेती में तो मेहनत करनी होती है, पर व्यापार में अगर क़िस्मत ने साथ न दिया तो आज का धनवान कल राह का भिखारी बन जाता है। व्यापारी को सदा चिंता सताती रहती है, उसे किसी तरह का सांसारिक सुख नहीं होता। तुम्हारी ज़िंदगी में इस तरह की कोई समस्या नहीं है तो इसका कारण तुम्हारे पिता की दूरदर्शिता है!" ये शब्द सुनने पर गजपति की आँखें खुल गईं। वह अपनी अज्ञानता पर बहुत ही लज्जित हुआ।

दूसरे दिन भूपति ने माणिक्यवर्मा से पूछा–"मैंने सुना है कि तुमने मेरे बेटे को अपने भाई का वृत्तांत सुनाया है। लेकिन तुम्हारे भाई कौन हैं? मैंने तो कभी उनको देखा नहीं? क्या सचमुच तुम्हारे कोई भाई भी थे?"

"दोस्त, तुम्हारे प्रति मेरी जो गहरी दोस्ती है, इस कारण तुम्हारी समस्या को हल करने के लिए मैंने एक मन गढ़ंत कहानी तुम्हारे बेटे को सुनाई। लगता है कि तुम्हारे बेटे का दिल बदल गया है। मुझे तो बड़ी खुशी हो रही है।" माणिक्यवर्मा ने अपना संतोष प्रकट किया।
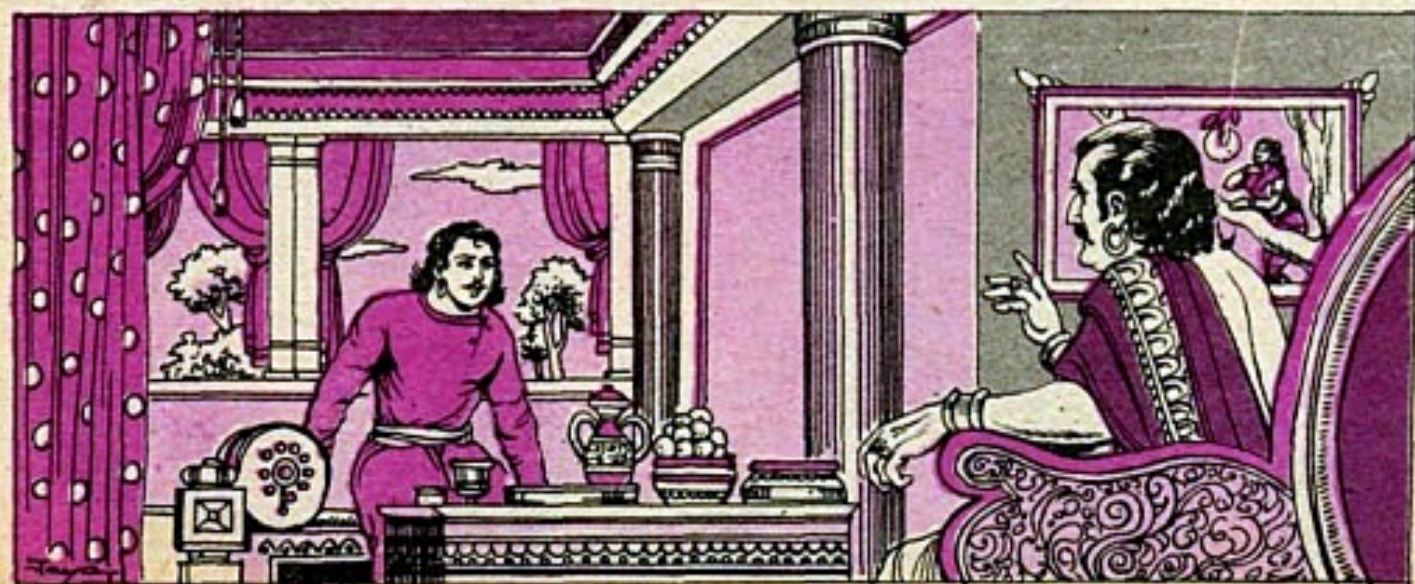
एक से बढ़कर एक

प्राचीन काल में अवंती राज्य पर धीरदत्त नामक राजा शासन करते थे। वे एक आदर्श राजा थे। उनके राज्य में नाम के वास्ते भी चोरों का भय न था। उनका पुत्र राजशेखर था। धीरदत्त जब बूढ़े हो गये, तब अपने पुत्र का राज्याभिषेक करना चाहा।

राज्याभिषेक के एक दिन पूर्व राजशेखर के मन में यह विचार आया कि उनके राज्य में चोरियाँ बिलकुल न हो रही हैं, इसका क्या कारण है? चोरियों को रोकने के लिए उसके पिता कौन-सी कार्रवाइयाँ कर रहे हैं? इसका पता लगाने के हेतु राजशेखर ने चोरी करना चाहा। उसने अपना वेष बदल कर एक धनी के घर में प्रवेश किया। थोड़ी-सी संपत्ति चुराकर वह अपने महल की ओर चल पड़ा। उसने सोचा कि चोरों को रोकने के सारे प्रयत्न क्या व्यर्थ हैं? इस संबंध में अपने पिता को सचेत करके राजशेखर ने उनकी राय जाननी चाही।

यों सोचते हुए राजशेखर अंधेरे में दबे पाँव चला आ रहा था, तभी उसके कंधे पर किसी का ज़बर्दस्त हाथ पड़ गया। उसने चौंक कर पीछे घूम कर देखा। चोर जैसा एक व्यक्ति धीमी आवाज़ में बोला—"चिल्लाओ मत! पहरेदार हैं, खबरदार! मैं भी एक चोर हूँ।"

ये शब्द सुनते ही राजशेखर के मन में एक विचार आया। वह यह था कि उसी के हाथ चोर आ गया है। उसे बन्दी बनाकर अपने पिता से भी समर्थ राजा कहलाने का यही अच्छा मौक़ा है!

चोर ने आगे बताया—"मेरा नाम वीरभल्ल है। तुम मेरे डेरे पर आ जाओ, मेरा हिस्सा देकर अपना रास्ता नाप लो।"

रामयश त्रिपाठी

"चलो, तुम्हारे डेरे पर चले चलेंगे।" राजशेखर ने कहा।

दोनों नगर की सीमा पर स्थित दो बड़ी गुफाओं में पहुँचे। वीरभल्ल राजशेखर को एक गुफा के भीतर ले गया। मशाल की रोशनी में राजशेखर को गुफा की दीवारों पर तलवार, कटार, धनुष वगैरह दिखाई दिये।

राजशेखर ने पूछा—"क्या तुम्हारे कोई अनुचर नहीं हैं?" इस पर वीरभल्ल ने तालियाँ बजाईं। दूसरे ही क्षण दूसरी गुफा में से बीस सिपाहियों ने प्रवेश करके राजशेखर को बन्दी बनाया। इसे देख राजशेखर चकित रह गया।

वीरभल्ल ने मुस्कुराकर कहा—"चोर युवक, क्या तुम मेरे राज्य में चोरी करना ऐसा सरल कार्य समझते हो? मेरे शासन में यही पहली बार चोरी हुई है! मैं दो दिनों के अन्दर सार्वजनिक प्रदेश में तुम्हारा फ़ैसला करके दण्ड दूंगा।"

राजशेखर ने भांप लिया कि यह कंठ-ध्वनि उसके पिता की है, वह बड़ा प्रसन्न हुआ। इस ख्याल से उसने अपना वास्तविक रूप प्रकट होने न दिया कि देखें, उसके पिता का फ़ैसला कैसा होता है और उसे कौन सा दण्ड देनेवाले हैं! फिर क्या था, सिपाही उसे बन्दी बनाकर कारागार में ले गये। कारागार का अधिपति राजशेखर का मित्र था। उसे अपना वास्तविक उद्देश्य बताया, अपना वेष बदलकर राजशेखर कारागार से मुक्त हो अपने महल को चला गया।

सवेरा हुआ। उसी दिन राजशेखर का राज्याभिषेक था। यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। इस पर राजा धीरदत्त ने अपने पुत्र राजकुमार राजशेखर को समझाया—"आज तक मेरे राज्य में चोरी न हुई थी, पर कल एक चोरी हुई। यह घटना मेरे मन को विकल बना रही है। इसलिए तुम्हें भविष्य में चोरों के संबंध बहुत ही सतर्क रहना होगा।"

राजशेखर ने अपने पिता की बातें गांठ बंध लीं। उस दिन रात को अपने घोड़े पर इस बात की जांच करने निकला कि नगररक्षक सावधान हैं या नहीं।

वह थोड़ी ही दूर गया हुआ था कि चोरों के एक दल ने अचानक राजशेखर को घेर लिया। राजशेखर ने झट म्यान से तलवार निकाली और अपनी रक्षा करने के प्रयत्न में लग गया। उसे इस बात का और आश्चर्य हुआ कि आज तक जहाँ उसके राज्य में एक भी चोर दिखाई न देता था, पर जिस दिन उसका राज्यभिषेक हुआ, उसी दिन एक साथ इतने सारे चोर व डाकू कहाँ से और कैसे निकल पड़े?

इतने में कोई व्यक्ति घोड़े पर आ निकला और चोरों पर हमला करके उन्हें भगा दिया। चोरों को बन्दी बनाने के लिए राजशेखर ने उनका पीछा किया।

मगर राजशेखर की मदद करने जो व्यक्ति आया था, वह बोला–"राजन्, अब वे चोर आपके हाथ में पड़नेवाले नहीं हैं। मेरे आक्रमण को देख सहम गये हैं। आइंदा वे चोर दिखाई नहीं देंगे।"

राजशेखर ने उस आगंतुक से पूछा–"आप कौन हैं? इस देश के निवासी नहीं हैं? वक्त पर आप ने मेरी मदद की!"

"राजन! मैं पड़ोसी देश का निवासी हूं। अपने देश में कोई जीविका का उपाय न देख कुछ महीने पहले मैं अपने पुत्र के साथ इस राज्य में आया। कल से मेरा पुत्र दिखाई नहीं दे रहा है! मैं उसकी खोज में निकला था, चोरों के द्वारा आप पर हमला करते मैंने देखा। कल ही मैंने आपका राज्याभिषेक देखा था, इसलिए आपको बड़ी आसानी से पहचान पाया। मुझे लगा कि आपकी सहायता करना मेरा कर्तव्य है।" आगंतुक ने समझाया।

राजशेखर ने सोचा कि परदेशी होकर भी जिसने उसकी सहायता की, उसका

सत्कार करना परम कर्तव्य है। यों सोचकर राजशेखर ने अपनी अंगूठी आगंतुक के हाथ देते हुए कहा–"कल सुबह आप राजदरबार में मुझे यह अंगूठी दिखाइये। आप जो चाहेंगे सो दूंगा।"

दूसरे दिन दरबार प्रेक्षकों से भरा हुआ था। अपने पिता को अनुपस्थित देख राजशेखर इसका कारण समझ न पाया।

इतने में परदेशी ने अंगूठी के साथ प्रवेश किया। राजशेखर ने उसे निकट बुला कर पूछा–"आप अपनी कामना बताइये। मैं ज़रूर उसकी पूर्ति करूँगा।"

"महाराज, मैंने सुना है कि परसों रात को चोरी करते हुए मेरा पुत्र आपके पिताजी के हाथों में बन्दी हो गया है और इस वक़्त वह करागार में है। कृपा करके उसका अपराध क्षमा करके उसे कारागार से मुक्त कर दीजिए। वह मेरा इकलौता पुत्र है। मैं उसे साथ लेकर अपने देश को इसी वक़्त लौट जाऊँगा।" परदेशी ने कहा।

राजशेखर पल-भर के लिए स्तब्ध रह गया। उसने सोचा–परसों रात को उसीने चोरी की है। कोई दूसरी चोरी उस दिन नहीं हुई। इस परदेशी का यह कहने में क्या अर्थ है कि उसका पुत्र बन्दी होकर कारागार में पड़ा हुआ है। यदि दरबार में राजा होते तो यह समस्या क्षण-भर में हल हो जाती।

यों विचार कर राजशेखर गद्दी पर से उठ खड़ा हुआ और अपने महल में चला गया। दरबारियों को यह सब कुछ विचित्र-सा लगा।

उस वक़्त परदेशी ने अपना वेष बदल दिया और महाराजा के रूप में सबके सामने खड़ा रहा। दरबारियों ने हर्षनाद किये। तब महाराजा अपने आसन पर बैठ गये। दरबारियों के अनुरोध करने पर महाराजा ने बताया कि उन्होंने ही अपने पुत्र के सामने यह परीक्षा रखी है। इतने में राजशेखर चोर का वेष धरकर

सभा में आया और उच्च स्वर में बोला–"पिताजी! आप कहाँ पर हैं? चलिए, हम अपने देश को लौट जायेंगे। राजा ने आपकी इच्छा पर मुझे अभी-अभी कारागार से मुक्त किया है।"

क़ैदी को देखते ही महाराजा धीरदत्त सिंहासन पर से उठ खड़े हुए और बोले–"यह बताओ, तुमको मुक्त करनेवाले राजा कहाँ पर हैं?"

राजशेखर ने हठात् पहचान लिया कि परदेशी और कोई नहीं हैं, बल्कि उसके पिता हैं। उसने अपना वेष हटाकर कहा–"चोर युवक को मुक्त करनेवाला राजा मैं ही हूँ!"

फिर क्या था, दरबार कोलाहल से गूँज उठा। धीरदत्त ने प्रेमपूर्वक अपने पुत्र के साथ आलिंगन किया।

इस पर राजशेखर ने समझाया–"आपके शासन की क्षमता का पता लगाने के ख्याल से मैंने चोर का अभिनय किया। मैं जानता था कि आपने ही मुझे बन्दी बनाया, फिर भी आपके फ़ैसले व दण्डविधान की जानकारी पाने के विचार से मैं प्रकट नहीं हुआ। मैंने अब जान लिया कि आप किस प्रकार दक्षता के साथ शासन का कार्य संभाल रहे हैं। मगर मैं यह समझ नहीं पा रहा हूँ कि बीच में परदेशी कैसे आ टपक पड़े?"

"राजशेखर! मैं तुम्हारी तीक्ष्ण बुद्धि पर क़ायल हूँ। तुम्हारी शक्ति एवं सामर्थ्य की परीक्षा लेने के लिए ही मैंने तुम पर चोरों के द्वारा आक्रमण करने का नाटक रचा। चोर युवक के विषय में तुम्हारा निर्णय जानने के लिए ही मैंने परदेशी के रूप में प्रवेश करके तुम्हारे सामने ऐसी कामना व्यक्त की। लेकिन जैसे तुमने मुझे परदेशी के रूप में पहचान लिया, वैसे मैं यह पहचान न पाया कि चोर युवक तुम्हीं हो!"

"पिता और पुत्र एक से बढ़कर एक हैं!" यों सभी दरबारियों ने मुक्त कंठ से उनकी प्रशंसा की।

क्या भगवान खाना न देंगे?

एक गाँव में सोमू और गोपू नामक दो दोस्त थे। गोपू मेहनत करके अपना पेट भर लेता था, जब कि सोमू काम-वाम कुछ करता न था।

गोपू ने एक बार सोमू को डांटा। इस पर उसने कहा–"भगवान ही खाना देंगे, चिंता क्यों करूँ?" पर सोमू ने समझाया कि बिना मेहनत किये भगवान भी खाना न देंगे।

सोमू यह साबित करने के लिए कि भगवान ही खाना खिलायेंगे, एक जून भोजन करना बंद करके बैठ गया। गोपू भी उसके निकट जाकर बैठ गया। थोड़ी देर में सचमुच एक थाली भोजन के साथ सोमू के आगे आ पहुँची। उसे सोमू अपने हाथ में लेने को हुआ, पर वह दूर सरकती गई। आख़िर बड़ी दौड़-धूप के साथ हांपते-पसीना बहाते जाकर उसके पीछे दौड़ा, तब जाकर थाली उसके हाथ में आ गई।

तब गोपू ने समझाया–"क्यों वे, भगवान ने जो खाना दिया, उसे पाने के लिए तुम्हें इतनी मेहनत करनी पड़ी है न?"

तीन दुलहिनें

मायापूर रियासत के तीन तरफ़ तीन रियासतें थीं। उनके नाम क्रमशः रत्नगढ़, कुबेरपुर और सिंहभूम हैं। इन तीनों रियासतों के शासकों के कोई पुत्र न थे, लेकिन प्रत्येक के घर एक एक कन्या थी। उनके नाम नंदिनी, लतिका और स्वप्ना। तीनों विवाह के योग्य हो चुकी थीं।

मायापूर के शासक देवाशीष के कल्याण नामक एक पुत्र था। वह अत्यंत बलवान एवं पराक्रमी था। इसलिए पड़ोसी रियासतों के शासकों ने कल्याण को अपना जामाता बनाना चाहा। इस आशय का समाचार भी तीनों ने मायापूर के शासक के पास भेजा।

यह समाचार पाकर देवाशीष संकट में पड़ गया। वह अपनी पड़ोसी रियासतों के विरुद्ध निर्णय नहीं ले पाता था। क्योंकि वे तीनों मायापूर के शासक की अपेक्षा कहीं बलवान थे। वे चाहें तो उसे बड़ी आसानी से पराजित कर सकते थे। खासकर रत्नगढ़ की समस्या बड़ी ही जटिल थी। मायापूर के लिए प्राणवाहक जैसा वाणिज्य पथ रत्नगढ़ से होकर जाता था। इसलिए रत्नगढ़ से शत्रुता मोल लेने का अर्थ मायापूर के लिए आत्महत्या के समान था। साथ ही वैसे तीनों राजकुमारियाँ सुंदर थीं, लेकिन रत्नगढ़ की राजकुमारी नंदिनी सब से ज़्यादा सुंदर थी। राजकुमार कल्याण भी विशेष रूप से नंदिनी को अपनी वधू बनाना चाहता था। इसके पूर्व एक बार वह नंदिनी से मिला था। नंदिनी भी कल्याण के प्रति विशेष आकृष्ट थी।

तीनों रियासतों के दूतों के चले जाने पर देवाशीष ने अपने पुत्र कल्याण से

श्री. ए. सी. सरकार, जादूगर

गुप्त मंत्रणा की। उसे समझाया–"बेटा, तुम जानते हो कि इस वक़्त हमारे सामने कैसी जटिल समस्या उपस्थित है। इसका एक मात्र हल है--तीनों राजकुमारियों के साथ एक ही दफ़े विवाह करना।"

"पिताजी, इसके लिए शायद उन कन्याओं के पिता तैयार न होंगे।" कल्याण ने अपनी शंका प्रकट की।

"तो फिर इसका हल क्या होगा?" देवाशीष ने पूछा।

"हमारा निर्णय सुनाने के लिए आप उनसे थोड़ी अवधि माँग लीजिए।" कल्याण ने सुझाया।

दरबारी जादूगर ने कल्याण को उदास देख पूछा–"आप उदास क्यों हैं?"

कल्याण ने सारा वृत्तांत उसे सुनाकर बताया कि वह नंदिनी से ही विवाह करना चाहता है।

"ओह, यह बात है! आप एक ही वार में दो पक्षी गिराना चाहते हैं? आप रत्नगढ़ के राजा के साथ मैत्री और नंदिनी के साथ विवाह चाहते हैं न? अन्य राजाओं के साथ शत्रुता भी मोल लेना नहीं चाहते हैं। यही है न?" जादूगर सोमनाथ ने हँसते हुए पूछा।

"क्या आप का जादू इस कार्य में सहायक बन सकता है?" कल्याण ने पूछा।

"राजकुमार! सूक्ष्मबुद्धि और उपज्ञा होनी चाहिए, बस! ऐसी कोई बात न होगी जिसे जादू हल न कर सकता हो।
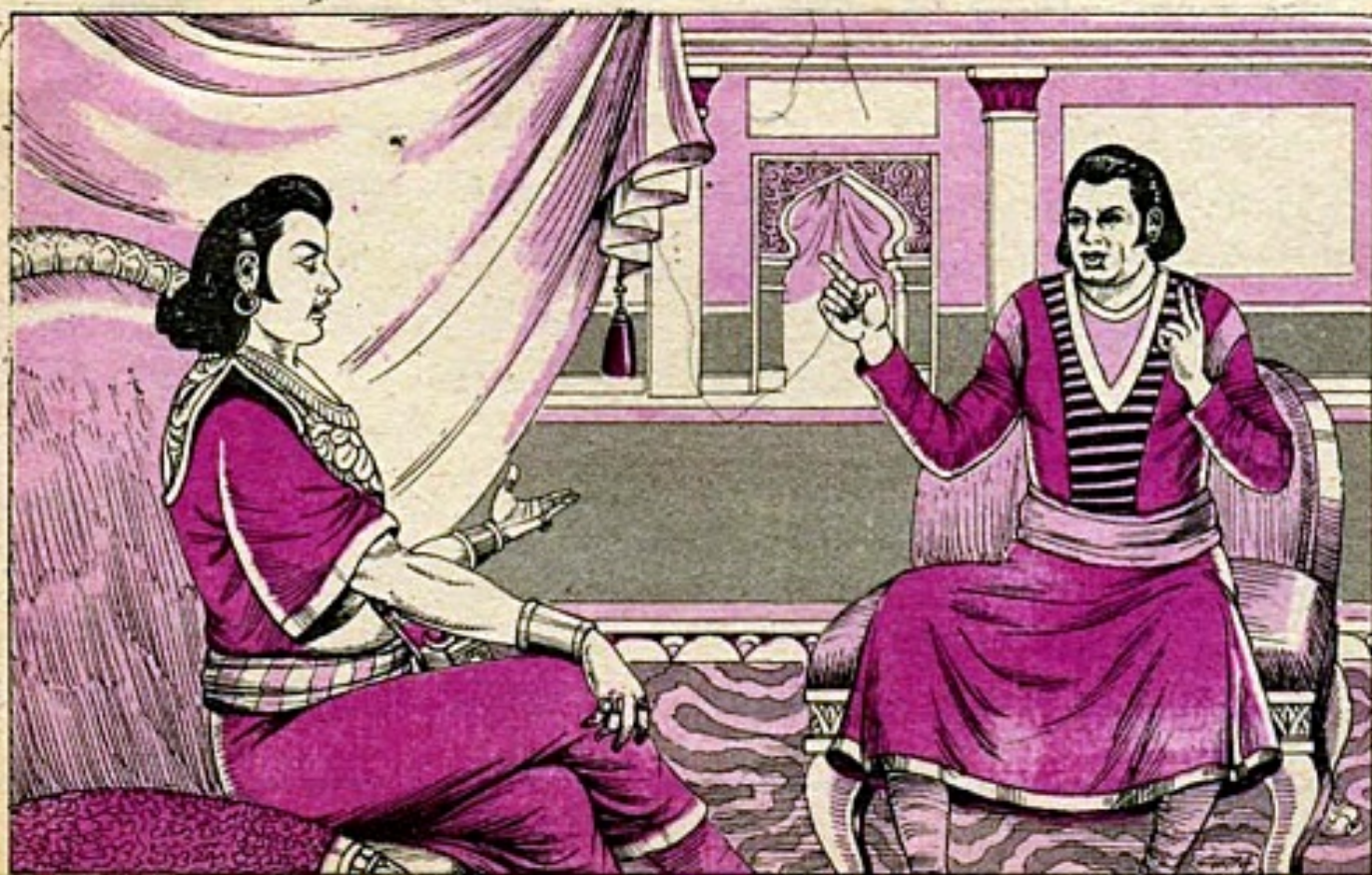
यह बताइये कि नंदिनी के साथ क्या आपका परिचय भी है?" सोमनाथ ने सवाल किया।

"वैसे कोई घनिष्ट परिचय नहीं है, मगर ज़रूरत पड़ने पर उससे बात कर सकता हूँ।" कल्याण ने बताया।

"क्या ज़रूरत पड़ने पर नंदिनी आप के कहे अनुसार करने को तैयार हो जायगी?" सोमनाथ ने पूछा।

"मैं समझता हूँ कि मेरे साथ विवाह करने के लिए वह सब-कुछ करने को तैयार हो जाएगी।" कल्याण ने कहा।

"तब तो मैं आप की समस्या हल कर सकता हूँ।" सोमनाथ ने कहा।

दूसरे दिन कल्याण ने अपने पिता से मिलकर समझाया—"पिताजी! हमारी भांति बाक़ी तीनों राजा भाग्य पर विश्वास करनेवाले हैं। इसलिए वधू का चुनाव करने के लिए थोड़े कार्यक्रम व पूजा आदि का प्रबंध करेंगे। इसके वास्ते एक कार्य-क्रम है—कुंकुम की परीक्षा। आप उन तीनों राजाओं को इस परीक्षा को स्वीकार करने के लिए मनवा लीजिए।"

इसके बाद कल्याण ने अपने पिता को पूरी योजना सुनाई। राजा देवाशीष अत्यंत प्रसन्न हुआ और उसी वक़्त अपने पट्ट हाथी पर सवार हो सदल-बल तीनों राजाओं से मिला।

निश्चित योजना के अनुसार तीनों राजा अपनी पुत्रियों, बन्धु-मित्र, परिवार तथा पुरोहितों को भी साथ ले मायापूर के
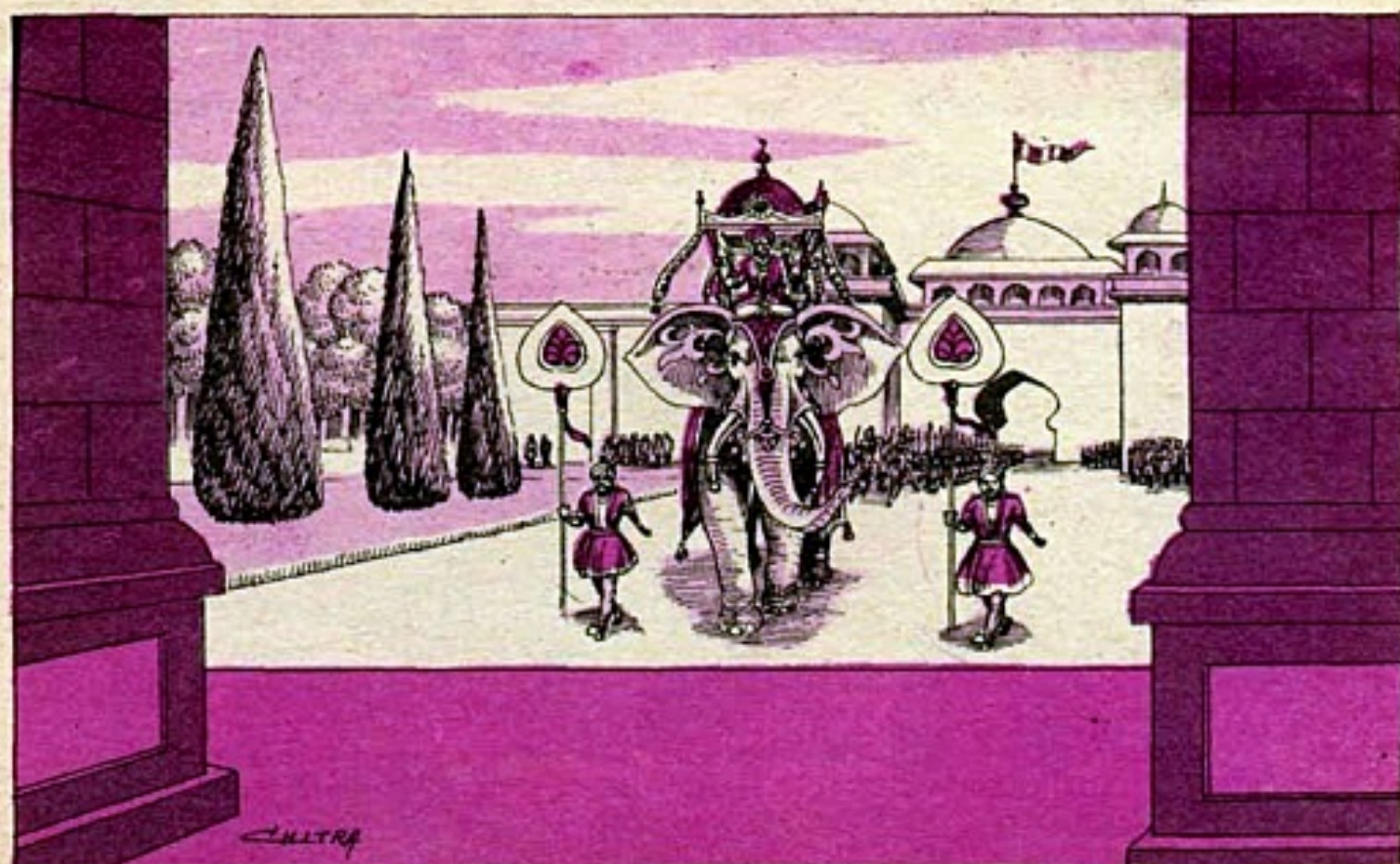
एक विशाल मंदिर के आहते में आ पहुँचे। मंदिर का भव्य अलंकार किया गया था। कल्याण वर की पोशाकों में था और तीनों राजकुमारियाँ दुलहिनों के वेष में थीं। नंदिनी, लतिका और स्वप्ना एक ओर खड़ी थीं और दूसरी तरफ़ कल्याण खड़ा हुआ था।

मंदिर के पुजारी ने भगवान की पूजा की। एक पीतल के थाल में तेल मिश्रित कुंकुम लेकर बाहर आया। पुजारी ने तीनों राजकुमारियों की हथेलियाँ स्वच्छ वस्त्र से साफ़ किया और उन्हें अपनी-अपनी मुट्ठियाँ बंद करने को कहा। इसके बाद कल्याण की हथेली साफ़ करके उस पर कुंकुम की बिंदी लगाई, तब कहा–"इन तीनों राजकुमारियों के भाग्य में जिसको राजकुमार कल्याण की पत्नी बनने को लिखा हुआ है उस कन्या की हथेली में यह चिह्न बदल जाएगा।" इन शब्दों के साथ पुरोहित ने कल्याण के हाथ पर की कुंकुम की बिंदी मिटा दी। तब राजकुमारियों की तरफ़ मुड़कर बोला–"राजकुमारियो, अब आप अपनी अपनी मुट्ठियाँ खोलकर दिखा दीजिए!"

लतिका और स्वप्ना की हथेलियाँ साफ़ थीं, पर नंदिनी की हथेली में ही कुंकुम का चिह्न था। इस पर तीनों राजाओं ने आगे बढ़कर नंदिनी और कल्याण को आशीर्वाद दिये। लतिका और स्वप्ना अपनी निराशा को सहन कर गयीं और विवाह के उत्सव में भाग लिया।

पर नंदिनी की हथेली में कुंकुम का चिह्न कैसे आ गया! उसने अपनी बीच की उंगुली के नाखून पर कुंकुम लगा रखा था। उसने सभी उंगलियों में मेहँदी लगा रखी थी, इसलिए कुंकुम के रंग में उसका रंग भी मिल गया और दर्शकों को इसका पता न चला। उसने मुट्ठी बंद करते समय उस नाखून को हथेली में दबाया था, तब कुंकुम का चिह्न हथेली में अंकित हो गया था। यह काम नंदिनी के द्वारा कल्याण ने ही करवाया था।

वाक्चातुरी

विदेह नामक राज्य में रामशास्त्री नामक एक ज्योतिषी था। वह दरबारी ज्योतिषी बनना चाहता था। उसने अपनी यह इच्छा एक बार राजा के सामने रखी।

मगर राजा का ज्योतिष पर विश्वास न था। जो भी अपने को ज्योतिषी बताते हुए नौकरी की माँग करते, उनसे राजा यही पूछा करता था–"आप बताइये कि मैं आप को नौकरी देना चाहता हूँ या नहीं?" यदि वे कहते–"महाराज! आप हमें नौकरी देना चाहते हैं।" तो राजा यह उत्तर देकर उन्हें भेज देता–"आप का विचार गलत है। मैं आप को नौकरी देना नहीं चाहता। आप जा सकते हैं।"

यदि यह कहते कि "आप हमें नौकरी देना नहीं चाहते हैं।" यह बात ज्योतिष शास्त्र के लिए अपमान की बात है। इसलिए यह बात कोई अपने मुँह से नहीं निकालता था।

मगर रामशास्त्री बोला–"महाराज! आप मुझे नौकरी देना नहीं चाहते हैं।"

राजा झट बोला–"आप का विचार गलत है। मैंने आप को नौकरी देना चाहा, इसलिए आप का ज्योतिष गलत साबित हुआ है।" "महाराज! तब तो मेरा ज्योतिष गलत नहीं है। आप मुझे नौकरी नहीं दे रहे हैं, यदि मेरे ज्योतिष को सचमुच गलत साबित करना चाहते हैं, तो मुझे नौकरी दीजिए! नहीं तो ज्योतिष की बात छोड़कर मुझे नौकरी देना चाहते हैं, इसलिए दे दीजिए।" रामशास्त्री ने समझाया।

जब आँखें खुलीं

एक गाँव में दीनू नामक एक किसान था। वह गल्ले का व्यापार किया करता था। उसके तीन और भाई थे। तीनों ने खेती करके धन कमाया और खेत भी ख़रीदे। मगर दीनू दूसरों को खुशहाल देख सहन नहीं कर पाता था।

दीनू के पास जोगीन्दर नामक एक गुमाश्ता था। उसने एक दिन दीनू से कहा—"मालिक! आप जो तनख्वाह देते हैं, उससे मैं अपनी घर-गृहस्थी चला नहीं पाता हूँ। आप मुझे थोड़े से रुपये उधार दीजिए, मैं भी गल्ले का व्यापार करूँगा। मैं जो कुछ गल्ला ख़रीदूंगा, उस पर थोड़ा-सा नफ़ा लेकर वह गल्ला फिर से आप को बेचूंगा। आप उसे अधिक लाभ पर बेचकर नफ़ा उठाइयेगा।"

ये बातें सुन दीनू हँस पड़ा और बोला—"अबे, तुम भी मेरे बराबर बड़े व्यापारी बनना चाहते हो? तुम व्यापारी बन जाओगे तो मेरे यहाँ गुमाश्ते का काम कौन करेगा?" जोगीन्दर को कोई जवाब देते न बना, वह चुप रह गया।

एक दिन दीनू और जोगीन्दर दोनों नदी के उस पार के गाँवों में गल्ला ख़रीदने चले गये। वहाँ के दलालों ने समझाया—"आप लोग यहीं पर रहिये। हम किसानों के यहाँ गल्ले का सौदा करके अभी लौट आते हैं। हमें हर एक क्विंटाल पर चार रुपये दलाली दीजिए।"

इस पर दीनू ठठाकर हँस पड़ा और बोला—"अरे तुम लोग भी मेरे बराबर के व्यापारी बनना चाहते हो? तुम लोगों की दलाली की हमें जरूरत नहीं, तुम लोग नाव पर बोरे लादने का काम देख लो।"

दलाल गुस्से में आ गये। मगर वे लोग यह सोचकर चुप रहे कि दीनू से

सुनीता अग्रवाल

झगड़ा करने पर मज़दूरी भी न मिलेगी। दीनू ने उस गाँव में चार नावों पर लादने लायक़ गल्ला ख़रीदा, उसे घर पहुँचाने का काम जोगीन्दर को सौंपकर वह पहले ही अपने गाँव चला गया।

दो दिन बाद जोगीन्दर दीनू के घर पहुँचा, आँखों में आँसू भरकर खड़ा रह गया। दीनू ने जोगीन्दर को उदास देख पूछा—"जोगीन्दर! तुम उदास क्यों हो?"

"मालिक! क्या बताऊँ? मैं जिन नावों पर गल्ला लाद कर ला रहा था, बवंडर के उठने के कारण हमारी चारों नावें नदी में डूब गईं। भगवान की कृपा से हम लोग प्राणों के साथ बच गये।" जोगीन्दर ने जवाब दिया।

यह जवाब सुनने पर दीनू का कलेजा बैठ गया। क़र्ज लाकर उसने भारी पैमाने पर व्यापार किया तो सारा माल पानी में चला गया। इसके बाद दीनू ने अपने भाइयों के घर जाकर अपना दुखड़ा सुनाया। भाइयों ने कहा—"भैया! हमने तुम से कभी नहीं कहा था कि तुम क़र्ज लेकर व्यापार करो। हमारी जो सम्मिलत जमीन-जायदाद है, उसमें अपना हिस्सा लेकर जो कुछ करना चाहे, कर लो।"

इस पर दीनू ने अपने हिस्से की जमीन-जायदाद, घर-द्वार, मवेशी सब कुछ बेचबाचकर ऋणदाताओं को थोड़ा-थोड़ा अंश चुकाकर ऋण से मुक्ति पा ली। पर इस तरह उसका दीवाला निकल गया।

दीनू अब बे घर-बार था। ऐसी हालत में जोगीन्दर ने अपने घर में दीनू को आश्रय दिया। दीनू की पत्नी यह कहकर अपने मायके चली गई कि पराये घर में आश्रय लेने की बदक़िस्मती का मैं क्यों शिकार बनूँ?

जोगीन्दर ने दीनू को समझाया—"मेरे भी चार बच्चे हैं। मजदूरी करने पर ही मैं अपने परिवार का पेट भर सकता हूँ।" यों समझाकर जोगीन्दर दीनू को एक राजमिस्त्री के पास ले गया। राजमिस्त्री

ने उन दोनों को मिट्टी ढोने का काम सौंपा ।

दीनू को यह काम लज्जाजनक ही नहीं लगा, बल्कि लाभदायक भी प्रतीत नहीं हुआ । इसलिए उसने मिस्त्री से पूछा—"मैं भी मिस्त्री बनना चाहता हूँ । मुझे भी घर बनाने का काम सिखला दो न?"

मिस्त्री ठठाकर हँस पड़ा और बोला—"ओह, तुम भी मेरे बराबर बनना चाहते हो? तुम्हें ठोकरी ढोने का काम तो मिल गया है न? यह काम फिर कौन करेगा?"

दीनू ने ये बातें दूसरों से कही थीं, उनकी याद आते ही उसकी आँखें खुल गईं ।

थोड़े ही दिनों में वह मकान बनकर तैयार हो गया। दीनू से छिपाकर जोगीन्दर ने दीनू के ससुराल में खबर भिजवा दी कि व्यापार मे दीनू को बड़ा लाभ हो गया है। उसने एक नया मकान भी बनवा लिया है, इसलिए दीनू की पत्नी को गृह-प्रवेश के समय हाजिर होना चाहिए ।

फिर क्या था, यह खबर पाकर दीनू की पत्नी आ पहुँची । जोगीन्दर ने दीनू और उसकी पत्नी को स्नान करवाया और पीढ़ों पर बिठाया । पुरोहित ने आकर मंत्र पढ़े, रिश्तेदारों ने आकर भेंट-उपहार प्रदान किये ।

दीनू की समझ में न आया कि यह सब क्या हो रहा है! सबके भोजन कर चुकने के बाद जोगीन्दर ने दीनू को निकट बिठाकर समझाया—"मालिक! यह मकान आप का ही है । आप के गल्ले की नावें नदी में नहीं डूबीं; लेकिन आप ने हम को धुतकारा, हल्का समझा । इसलिए आप की आँखें खुलवाने के ख्याल से मुझे भी यह नाटक रचना पड़ा है ।"

इस पर प्रसन्न होकर दीनू ने कहा—"जोगीन्दर! तुम्हें भी मेरे बराबर के व्यक्ति बनना है ।" इन शब्दों के साथ दीनू ने जोगीन्दर को अपनी जायदाद में से आधी दे दी । दीनू में यह परिवर्तन देख उसके भाई खुश हुए ।
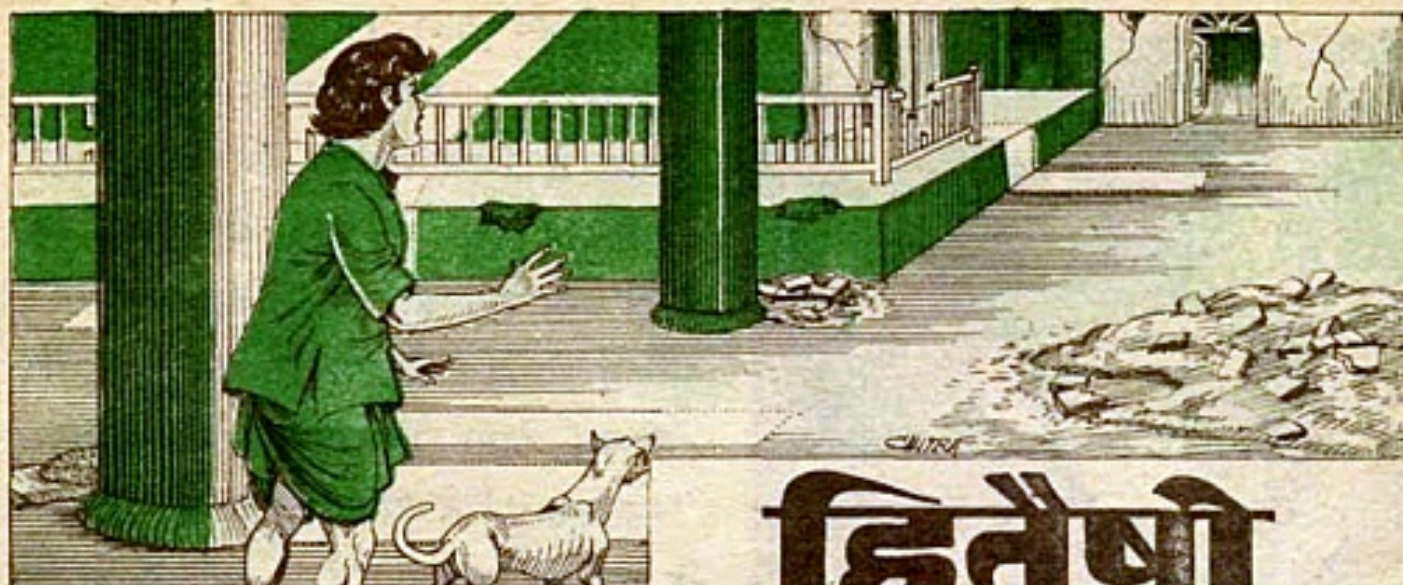
हितैषी

रामापुर के लोग एक साथ दो प्रकार से भयभीत थे। एक तो उन्हें चोरों का डर था और दूसरे भूतों का भय। गाँव से सटकर एक पुराना राजमहल था। गाँववालों का विश्वास था कि उस महल में भूतों ने अपना अड्डा जमाया है। इस डर से संध्या के बाद लोग अपने घरों से बाहर निकलने सें डरते थे। इसलिए यह हालत चोरों के लिए अनुकूल हो गई थी।

उन्हीं दिनों में किशन नामक एक युवक अपने कुत्ते को साथ ले गाँव में आ पहुँचा। किशन अकेला था। वह जहाँ भी लोगों को विपदा में फंसे देखता तो यथा शक्ति उनकी मदद किया करता था। उसे मालूम हुआ कि रामापुर के लोग यातनाएँ झेल रहे हैं, तब किशन ने उसी गाँव में रहने का निश्चय कर लिया।

किशन ने भूतोंवाले महल को अपना अड्डा बनाया और सारे महल की जाँच की। महल पुराना जरूर था, पर किसी भूत-प्रेत ने उसे नहीं सताया। इसलिए उसे लगा कि जनता में भूतों के भय और चोरों के डर का कोई संबंध ज़रूर है। इस कारण उसने इन दोनों समस्याओं को एक साथ हल करना चाहा।

किशन ने गाँव के मुखिये के पास जाकर समझाया कि वह चोरों को भगा सकता है, इसलिए उसके कहे अनुसार ढिंढोरा पिटवा दे। उसका सुझाव था कि संध्या के बाद किसी भी ग्रामवासी को घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए, किशन स्वयं गाँव में गश्त लगाते हुए बाहर जो भी दिखाई देगा, उसे चोर मान कर पकड़ लेगा।

गाँव के मुखिये ने किशन के सुझाव को मान लिया। तब किशन अपनी योजना

विश्वनाथ वर्मा

के अनुसार रात-भर सारे गाँव मे गश्त लगाता और गलियों में जो भी दिखाई देता, उसे पकड़ ले जाकर भूतों के महल में बांध कर रख देता और सवेरा होने पर उन्हें मुक्त किया करता था। इस योजना के कारण रोज दो-चार लोग किशन के हाथ पकड़े जाते और एक रात भूतों के महल में बिता देते थे।

किशन की इस योजना के द्वारा गाँववालों के लिए दो प्रकार से उपकार हुआ। वह रात-भर पहरा देता था, इस वज़ह से चोरों का खेल बंद हुआ। दूसरी बात यह थी कि रोज चार-पांच लोग भुतों के महल में रात बिता देते थे, इसलिए उन्हें यह अनुभव हुआ कि भूतों के महल में भूत नहीं हैं। मगर गाँव के कुछ लोगों ने मुखिये से शिकायत की कि किशन सब किसी को रात के वक़्त चोर मान कर बन्दी बना रहा है, यह उचित नहीं है। मुखिये ने जब किशन से इस बात की कैफ़ियत माँगी तो किशन ने बताया— "महानुभाव! मैं गाँववालों के मन से भूतों के भय को भगा रहा हूँ। भूतों के डर के जाने पर ही चोरों का भय जाता रहेगा।"

मुखिये ने किशन की युक्ति के रहस्य को समझ कर उसकी तारीफ़ ही नहीं की बल्कि चोरी को रोकने के उपलक्ष्य में सार्वजनिक रूप से उसका सत्कार भी किया।

इस घटना के दूसरे दिन की रात को दो युवक भूतों के महल में आये और किशन से मुलाकात करके बोले—"भाई, हमने सुना है कि तुमने इस गाँव को चोर-लुटेरों की झंझट से मुक्त किया है, पर क्या घराने जो चोर होते हैं, उनसे भी गाँव की मुक्ति नहीं दिला सकते हैं?"

"ऐसे घराने चोर कौन हैं?" किशन ने पूछा। इस पर युवकों ने बताया—"भाई साहब, हमारे पिताजी का नाम गोपीनाथ है। उन्होंने अपने जीवन काल में पटवारी के पास चार हज़ार रुपये उधार लिये

और ऋणपत्र लिख कर दिया। इसके बाद हमारे पिताजी ने पूरा ऋण चुकाया, मगर पटवारी ने ऋणपत्र वापस नहीं किया। इसके थोड़े दिन बाद हमारे पिताजी ने मरते वक़्त वह ऋण-पत्र हमें वापस लेने को कहा।

पटवारी ने ऋण-पत्र हमें नही दिया बल्कि उस ऋण-पत्र के आधार पर हमारे घर पर अधिकार कर लिया, अब वह उसी घर में रहता है। इस तरह हमें कंगाल बनाया है।"

"भाई, तुम दोनों ने जो कुछ कहा, उसकी सचाई का पता लगाऊँगा, तब पटवारी की खबर लूँगा। अब तुम लोग जा सकते हो।" इन शब्दों के साथ किशन ने उन्हें भेज दिया। उस रात को गश्त लगाते समय पटवारी के घर में किशन ने सेंध लगाई, पर उसने कोई चीज़ चुराई नहीं।

दूसरे दिन सवेरे किशन ने गाँव के मुखिये के घर जाकर पटवारी को बुला भेजने को कहा।

पटवारी ने मुखिये के घर प्रवेश करते ही किशन को देख पूछा—"भाई साहब, तुम तो सब जगह कहा करते हो कि इस गाँव को तुमने चोरों के डर से मुक्त किया है, मगर पिछली रात को किसी ने मेरे घर में सेंध लगाई है। इसका तुम क्या जवाब देते हो?" "पटवारी साहब! यह काम चोरों का नहीं होगा, भूतों का होगा।" किशन ने जवाब दिया।

"भूतों का काम? तुम्हें कैसे मालूम?" पटवारी ने पूछा।

"अजी, मैं तो भूतों के मकान में ही तो रहता हूँ।" किशन ने जवाब दिया।

"हाँ, तुम ठीक कहते हो। लेकिन भूत तुमको तंग नहीं कर रहे हैं न?" पटवारी ने पूछा।

"भूतों का अगर अपकार करते हैं तो वे भी हमारी हानि करते हैं, पर मैंने उनका अपकार ही क्या किया है? हाँ, कल रात को

मुझसे गोपीनाथ नामक एक भूत कह रहा था कि किसी ने उसका अपकार किया है। उसने आपको एक दिन रात को भूतों के मकान में बुलाया है।" किशन ने कहा।

ये शब्द सुनते ही पटवारी का चेहरा पीला पड़ गया और वह कांपने लगा।

"सुनिये साहब! भूत तो बड़े ही अच्छे होते हैं। आज रात को आप मेरे साथ चलिए। मैं भी सुनना चाहता हूँ कि गोपीनाथ आपसे क्या क्या कहना चाहता है?" किशन ने कहा।

"जी हाँ, पटवारी साहब! आप भूतों से बातें करने का मौक़ा हाथ से जाने न दीजिएगा।" मुखिये ने समझाया।

"बाप रे बाप! गोपीनाथ मुझे मार डालेगा। उसीने मेरे घर में सेंध लगाई होगी।" पटवारी चिल्ला उठा।

"गोपीनाथ को आप से दुश्मनी किसलिए?" मुखियें ने पूछा।

"उसने मुझसे रुपये उधार लिया था और वापस भी कर दिया। मगर उसका ऋण-पत्र लौटाने के पहले ही वह मर गया। इसलिए लोभ में पड़कर मैंने उसके मकान पर क़ब्ज़ा कर लिया है। उसके लड़कों को मैंने अनाथ बनाया है। इसलिए वह मुझसे बदला लेना चाहता होगा।" पटवारी ने कांपते स्वर में उत्तर दिया।

"ओह, यह बात है; तब तो आप वह मकान उसके लड़कों को लौटाइये। मुआवज़ा के मद्दे एक हज़ार रुपये उसके लड़कों को दे दीजिए। मैं गोपीनाथ को समझाऊँगा कि वह आपकी कोई हानि न करें।" किशन ने समझाया।

इसके बाद पटवारी ने गोपीनाथ का ऋण-पत्र मुखिये के हाथ सौंप दिया, गोपीनाथ का घर उसके लड़कों को सौंप कर उन्हे एक हज़ार रुपये का मुआवज़ा भी दिया।

इस घटना के दूसरे ही दिन किशन अपने कुत्ते को साथ लेकर देशाटन पर चल पड़ा।

व्यर्थ प्राणी

प्राचीन काल में तक्षशिला का विश्व विद्यालय सारे संसार में प्रसिद्ध था। एक बार एक वृद्ध आचार्य ने स्नातकोत्सव में भाषण देते हुए कहा–"मानव का जन्म अत्यंत ही उत्कृष्ट है। मनुष्य को उसका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। यदि मानव अपने प्राण त्याग देता है तो उसके द्वारा कम से कम अपने देश, समाज, या अन्य लोगों का, अथवा अपना ही सही, हित हो! मगर किसी भी मानव को अकारण ही प्राण खोकर व्यर्थ प्राणी नहीं कहलाना चाहिए।"

ये शब्द सुनकर एक विद्यार्थी ने सवाल किया–"आचार्यजी! कृपया बताइए कि कैसे व्यक्ति व्यर्थ प्राणी कहलाते हैं?"

"इसके उदाहरण स्वरूप में तुम लोगों को एक कहानी सुनाता हूँ।" इन शब्दों के साथ आचार्य ने यों कहना प्रारंभ किया:

प्राचीन काल की बात है। अंगदेश पर राजा सुनंद शासन करते थे। राजा अत्यंत समर्थ व्यक्ति थे, फिर भी कुछ अनिवार्य परिस्थितियों के कारण राज्य में अराजकता फैल गई। इससे फ़ायदा उठाकर शत्रु राजाओं ने अंग देश पर हमला किया।

इस कारण राजा सुनंद को एक साथ शक्तिशाली शत्रु राजा का तथा अपने ही राज्य में रहकर अधिकार को हस्तगत करने का प्रयत्न करनेवाले राजद्रोहियों का सामना करना पड़ा। फिर भी वे निराश नहीं हुए। वे अपने राज्य के साहसी युवकों को सेना में भर्ती करने का प्रयत्न करने लगे।

अंग देश में धनुर्विद्या में प्रवीणता प्राप्त दो अच्छे शिकारी थे। सेनापति ने राजा को सलाह दी कि उन दोनों शिकारियों को

निर्मला गौतम

सेना में भर्ती करने से राज्य का भला होगा। सेनापति का विचार था कि उन कुशल धनुर्धारियों को शत्रु राजा द्वारा हमला करनेवाले मार्ग में पेड़ों पर पहरे पर बिठा दे तो वे शत्रु दल के प्रमुख व्यक्तियों को अपने बाणों से मार गिरायेंगे।

राजा के सिपाही उन शिकारियों की खोज में चल पड़े। यह खबर मिलते ही उन धनुर्धारियों ने सोचा कि राजा की सेना में भर्ती में होकर देश की रक्षा में काम देने की अपेक्षा स्वेच्छापूर्वक जंगल में शिकार खेल कर जीवन बिताना कहीं उत्तम है। उनके मन में शिकार खेलने में जो उत्साह और आनंद था, वह युद्ध करने में न था।

फिर क्या था, दोनों शिकारी सिपाहियों की आँख बचा कर नगर को छोड़ जंगलों में भाग गये। दिन-भर उन दोनों ने शिकार की खोज की, पर उन्हें एक भी जानवर शिकार खेलने को दिखाई न दिया। मगर संध्या के समय एक हिरन झाड़ियों के बीच छलांग मारते उन्हें दिखाई दिया। दोनों ने उत्साह में आकर उस पर बाण चलाये। दोनों के निशान अचूक थे, इसलिए दोनों के बाण लगकर वह हिरन उसी क्षण मर गया।

इसके बाद शिकारियों के बीच इस बात को लेकर झगड़ा शुरू हुआ कि वह हिरन किसके बाण से मर गया है। इसलिए हिरन पर मेरा अधिकार होना चाहिए। थोड़ी देर तक दोनों के बीच वाद-विवाद चलता रहा।

आखिर दोनों का क्रोध बढ़ता गया। अंत में दोनों ने क्रोध में आकर अपनी छुरी निकाली, एक दूसरे पर वार करके दोनों मर गये।

वृद्ध आचार्य ने यह कहानी सुनाकर कहा—"वे दोनों शिकारी व्यर्थ प्राणी हैं। यदि वे दोनों अपने प्राण युद्ध क्षेत्र में त्याग दिये होते तो उन्हें देश के वास्ते प्राण त्यागने का यश प्राप्त होता और उन्हें वीर स्वर्ग भी मिल जाता।"

श्रीरामचन्द्रजी अयोध्या से चैत्र शुक्ला पंचमी के दिन वनवास के लिए चल पड़े थे। चैत्र शुक्ला चौथी तक चौदह वर्ष पूरे हो गये। इसके दूसरे दिन श्रीरामचन्द्रजी भरद्वाज के आश्रम में पहुँचे। भरद्वाज को प्रणाम करके उन्होंने पूछा— ऋषिवर! क्या अयोध्या नगर सुसंपन्न और सुखी है? भरत अच्छी तरह से शासन कर रहा है न? मेरी माताएँ कुशल व सुखी हैं न?"

इस पर भरद्वाज मुनि ने उत्तर दिया— "भरत दैहिक-संस्कार को भूल जटाएँ बढ़ाये आप की पादुकाओं को गद्दी पर रखकर राज्य का शासन संभाल रहे हैं। वे तो आप के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। शेष सभी लोग कुशल और सुखी हैं।"

इसके बाद भरद्वाज ने रामचन्द्रजी से अनुरोध किया कि वे एक दिन उनका अतिथि बनकर रहें, तब अयोध्या चले जायें!

श्रीरामचन्द्रजी ने सबसे पहले हनुमान को अयोध्या में भेजना चाहा; उसे बुलाकर समझाया—"तुम सबसे पहले श्रृंगिबेरपुर जाकर वहाँ के भील राजा गुह से कह दो कि मैं शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके सकुशल लौट रहा हूँ। मेरे अत्यंत आप्त व्यक्ति गुह यह समाचार सुनकर प्रसन्न होगा। वही तुम्हें अयोध्या का रास्ता बताकर भरत के समाचार भी देगा। इसके बाद तुम भरत से मिलकर मेरे

कुशल समाचार सुना दो, तब यह भी सूचित कर दो कि मैं वनवास समाप्त कर सीताजी व लक्ष्मण के साथ लौट रहा हूँ। तुम भरत को सीतापहरण से लेकर रावण के संहार तक का सारा वृत्तांत सुनाकर भरत के मुख मण्डल की प्रतिक्रिया जानने की कोशिश करो। इस बात का भी पता लगाओ कि मैं सारे शत्रुओं का संहार कर अपार यश प्राप्त करके महान शक्तिशाली मित्रों के साथ जब अयोध्या लौट रहा हूँ, यह समाचार सुनने पर भरत के मन में कैसे विकार उत्पन्न होते हैं। पिता व दादाओं के साम्राज्य का अनुभव करनेवाले को एक साथ उसे त्यागना पड़े तो वह कठिन बात होगी। अनेक वर्षों से राज्य शासन करनेवाले भरत के मन में अगर भविष्य में शासन करने की इच्छा हो, तो उसी को शासन करने दो। तुम को हमारे अयोध्या पहुँचने के पहले ही वापस लौट आना होगा।"

रामचन्द्रजी का आदेश पाकर हनुमान मानव के रूप में आकाश पथ से वेग के साथ अयोध्या की ओर चल पड़ा। सर्व प्रथम श्रृंगबेरीपुर पहुँचकर गुह से मुलाक़ात की। उसे रामचन्द्रजी का संदेशा सुनाया—"भाई, सुनो! श्रीरामचन्द्रजी ने तुम्हें अपने कुशल समाचार सुनाने को कहा है। वे आज रात को सीताजी तथा लक्ष्मणजी के साथ भरद्वाज मुनि के आश्रम में रहकर कल प्रात:काल रवाना होनेवाले हैं। तुम शीघ्र ही उनके दर्शन कर सकते हो।" यों सुनाकर हनुमान आकाश मार्ग से शीघ्रता के साथ नंदीग्राम की ओर चल पड़ा।

नंदीग्राम के चतुर्दिक नंदनवन का स्मरण दिलानेवाले अत्यंत सुंदर वृक्ष फैले हुए थे। वहाँ से अयोध्या केवल दो घड़ियों की यात्रा मात्र थी। वहाँ पर भरत आश्रम बनाकर हिरण के चर्म धारण कर रामचन्द्रजी के अभी तक न लौटते देख दुखी थे। उन्होंने इसी चिंता के कारण

स्नान तक न किया था। उनकी देह अत्यंत मलिन थी। उनके केश जटाओं से भरे थे। वे सिर्फ़ कंद-मूल एवं फलों का सेवन मात्र करते थे। उसी स्थिति में मंत्री, पुरोहित तथा सेनापतियों के सहयोग से राज्य शासन कर रहे थे। उनके अधीन कार्य करनेवाले सभी लोग गेरुए वस्त्र धारण किये हुए थे।

हनुमान ने भरत के दर्शन करके उन्हें प्रणाम किया और कहा–"रामचन्द्रजी ने आप को अपने कुशल समाचार सुनाने को कहा है। मैं आप की चिंता को दूर करनेवाली एक खबर सुनाता हूँ। आप शीघ्र ही रामचन्द्रजी के दर्शन कर सकेंगे। वे रावण का संहार करके सीताजी को प्राप्त कर अनेक शक्तिशाली मित्रों के साथ अयोध्या लौट रहे हैं। उनके साथ सीताजी और लक्ष्मण भी हैं।"

यह समाचार सुनते ही भरत अतिशय प्रसन्नता के मारे बेहोश हो गये। थोड़ी देर बाद होश में आने पर बोले–"महाशय, मैं नहीं जानता कि इस प्रकार का प्रिय समाचार देनेवाले आप मानव हैं या देवता? आप को पुरस्कार स्वरूप एक लाख गायें, सौ गाँव, समस्त आभूषण तथा चौदह कन्याएं प्रदान करूँगा।"
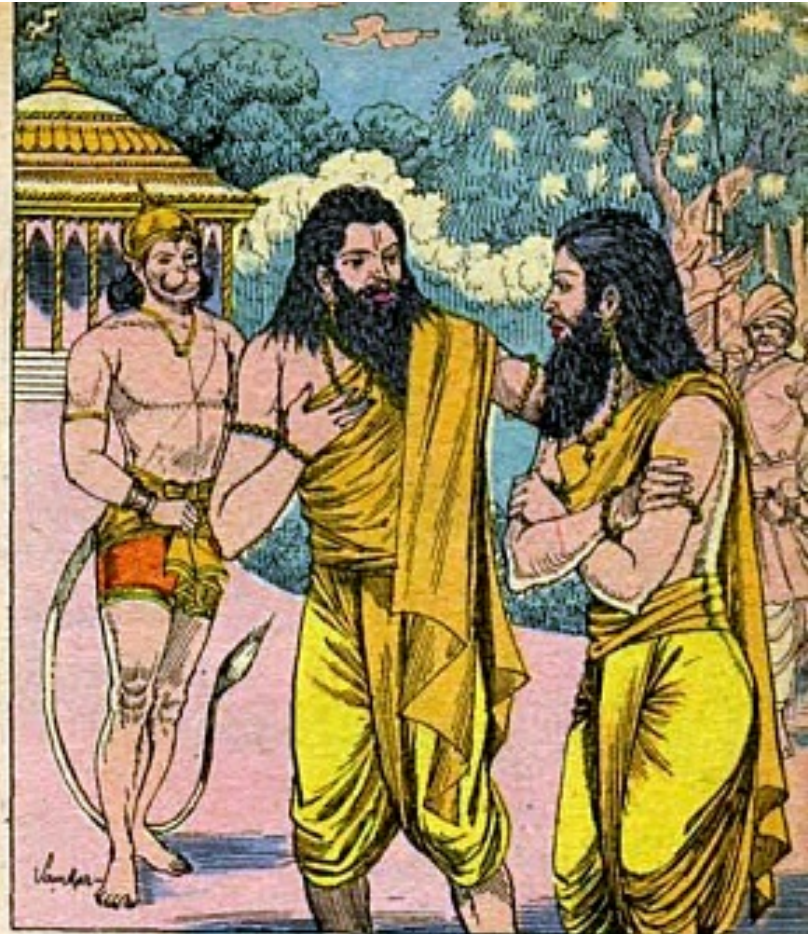
इसके बाद भरत की कामना पर हनुमान ने भरत द्वारा रामचन्द्रजी की पादुकाएँ लेकर चित्रकूट से अयोध्या लौटने के पश्चात जो जो घटनाएँ हुई, सविस्तार कह सुनाया।

भरत सारे समाचार सुनकर परमानंदित हो शत्रुघ्न से बोले–"भाई, तुम इस बात का प्रबंध करो कि नगर के चौकों पर स्थित मण्डपों में समस्त देवताओं का फूलों तथा वाद्यों के साथ पूजन करें। रामचन्द्र की अगवानी के लिए वैतालिक, वेश्याएँ, और वाद्यवृन्दों के साथ सभी लोग दल बांधकर चले।"

शत्रुघ्न ने हज़ारों सेवकों को बुलाकर आदेश दिया–"तुम लोग नंदीग्राम से

लेकर अयोध्या तक के सारे पथ को समतल बना दो। कुछ लोग सारे मार्ग में शीतल जल छिड़ककर उस पर फूल बिछा दो। सवेरा होने के पूर्व ही अयोध्या के सभी मार्गों तथा घरों को सजाना होगा। विशाल राजपथ पर फूलों के तोरण बांध दो, पुष्प एवं चन्दन छिड़ककर पाँच रंगोंवाले चूर्णों से सारे नगर के पथों में रंगोली सजा दो।"

इसके बाद रानियाँ, मंत्री, सैनिक, उनकी पत्नियाँ, ब्राह्मण, क्षत्रिय, गणनायक, गणों के लोग भी रामचन्द्रजी के दर्शन के लिए चल पड़े। कुछ लोग हाथियों पर तथा कुछ लोग रथों पर रवाना हुए। सैनिक विभिन्न प्रकार के आयुध लेकर कोलाहल के साथ चल पड़े। धृष्टी, जयंत, विजय, सिद्धार्थ, अर्थसाधक, अशोक, मंत्रपाल तथा सुमंत्र नामक मंत्री भी निकल पड़े। दशरथ की पत्नियाँ वाहनों पर नंदीग्राम पहुँचीं।

भरत स्वयं रामचन्द्र की पादुकाएँ अपने सर पर लिये रामचन्द्रजी की आगवानी के लिए चल पड़ा। उसके पीछे ब्राह्मण, व्यापारी, नगर के प्रमुख नागरिक, मालाएँ हाथ में लिये मंत्री तथा बन्दीजन भी चल पड़े। भरत के साथ राज-चिह्न छत्र, चँवर और स्वर्ण दण्ड भी ले जाये गये।

रामचन्द्रजी को बड़ी देर तक न पाकर भरत ने क्रोध में आकर डाँटते हुए हनुमान से कहा–"सुनो, तुमने अपनी मर्कट बुद्धि के कारण रामचन्द्र के आने का समाचार वैसे ही झूठमूठ तो नहीं दिया? रामचन्द्रजी कहाँ हैं? वे बिलकुल दिखाई नहीं दे रहे हैं?"

उधर मुनि भरद्वाज ने वानर सेनाओं को अत्यद्भुत भोजन दिया। उनके आश्रम के वृक्ष फल एवं पुष्पों से लदे हुए वानरों का उत्साह वर्द्धन कर रहे थे। उनका कोलाहल दूर तक सुनाई दे रहा था। ऐसा लगा कि अब वे लोग गोमती नदी को पार कर रहे हैं। लो, देखो, वही

पुष्पक विमान है। दूर पर दिखाई दे रहा है। एक समय यह विमान कुबेर का था, अब रामचन्द्रजी का हो गया है। उसमें श्रीरामचन्द्रजी के साथ सीतादेवी, लक्ष्मण, वानर राजा सुग्रीव तथा राक्षस राजा विभीषण भी हैं।" हनुमान ने कहा।

उसी समय सर्वत्र यह चिल्लाहट सुनाई दी–"देखिए! रामचन्द्रजी पधार रहे हैं।" फिर क्या था, रामचन्द्रजी के दर्शन के लिए आये हुए सभी लोग अपने वाहनों से उतरकर ज़मीन पर खड़े हो गये।

कुछ ही क्षणों में रामचन्द्रजी आ पहुँचे। भरत ने उन्हें प्रणाम करके कहा–"आपने अपने वचन का पालन कर हम सब को प्रसन्न बनाया है।"

रामचन्द्रजी भरत को विमान के भीतर ले गये और उसे अपने हृदय से लगाया।

इसके बाद भरत ने लक्ष्मण के कुशल समाचार जानकर सीताजी को प्रणाम किया। तब वानर वीरों से गले मिला। तदनंतर सुग्रीव से बोला–"भाई सुग्रीव! आप हमारे चार भाइयों के साथ एक और भाई बनकर पाँचवें भाई बन गये। जो उपकार करते हैं, वह मित्र बन जाते हैं।" फिर विभीषण से बोला–"आपने हमारी बड़ी सहायता की जो कभी भुलाई नहीं जा सकती।"

शत्रुघ्न ने राम और लक्ष्मणों को प्रणाम किया, फिर सीताजी के चरणों में वंदना की। इस घटना के बाद रामचन्द्रजी
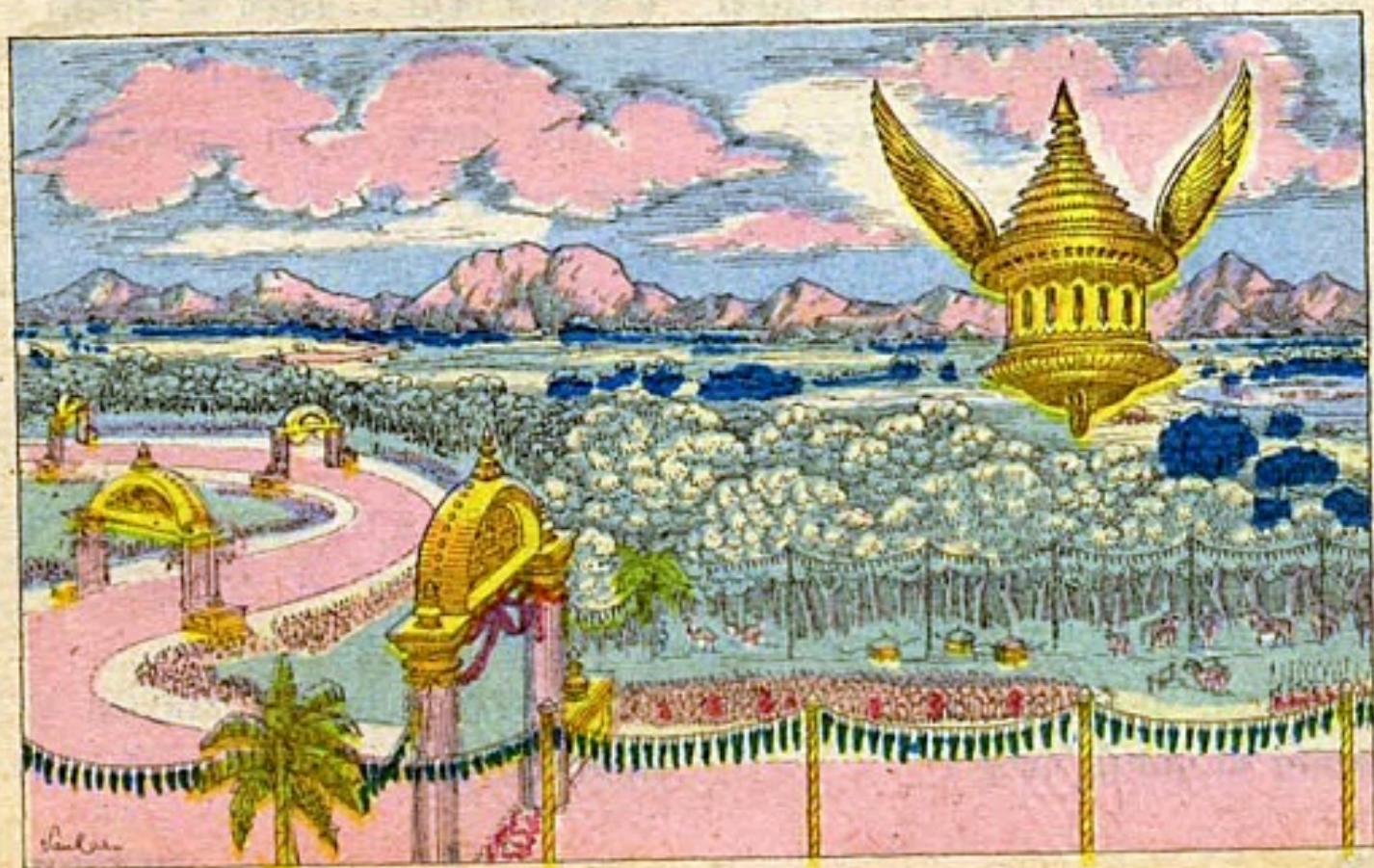
अपनी माताजी को देखने गये और उनके चरणों में प्रणाम किया। तब सुमित्रा, कैकेई तथा मुनि बसिष्ठ को प्रणाम किया। अयोध्या के नागरिकों ने रामचन्द्रजी का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत किया।

भरत ने अपने हाथों से रामचन्द्रजी की पादुकाओं को उनके चरणों में पहना दिया, फिर गद् गद् कंठ से बोला–"आज तक मैं आप के राज्य की रक्षा करता रहा, अब इसे आप के हाथ सुरक्षित सौंप रहा हूँ। आप को अयोध्या में लौटते इतने वर्षों बाद अपनी आँखों से देख पाया। इसलिए मेरा जन्म सार्थक हो गया है। मेरी कामना की पूर्ति हो गई है।"

इसके उपरांत रामचन्द्रजी विमान में नंदीग्राम पहुँचे। वहाँ पर विमान से उतरकर उसे कुबेर के पास जाने का आदेश दिया।

अब श्रीरामचन्द्रजी के राज्याभिषेक का मुहूर्त निश्चय किया गया। राम, लक्ष्मण और भरत ने नाइयों के द्वारा हजामत कराई। इसके बाद क्रमशः भरत, लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण तथा रामचन्द्रजी ने मंगल स्नान किये। रामचन्द्रजी ने पुष्प मालाएँ धारण कर अपनी देह पर चन्दन मलवा दिया, रेशमी वस्त्र धारण कर गद्दी पर बैठ गये, शत्रुघ्न ने राम, लक्ष्मण तथा भरत को हार, केयूर तथा अन्य आभूषणों से अलंकृत किया। दशरथ की पत्नियों ने सीताजी का अलंकार किया।

सुमंत्र नामक सारथी रामचन्द्रजी के वास्ते रथ ले आया और उस पर रामचन्द्र को बिठाया। सुग्रीव तथा हनुमान ने स्नान करके उत्तम वस्त्र धारण कर, आभूषण पहन लिए, तब अयोध्या के लिए रवाना हुए।

दशरथ के मंत्री पहले ही अयोध्या पहुँच गये, बशिष्ट से परामर्श करके राज्याभिषेक की तैयारियाँ कीं।

रामचन्द्रजी ने नगर के नागरिकों को बताया कि सुग्रीव के साथ उनकी मैत्री

कैसे हुई, हनुमान ने कैसे साहसपूर्ण कार्य किये, युद्ध में वानरों ने कैसा पराक्रम दिखाया, विभीषण क्यों उनके पक्ष में आ गये? इत्यादि। इस पर नागरिक आश्चर्य में आ गये। इसके बाद रामचन्द्रजी ने दशरथ के महल में प्रवेश किया, रामचन्द्र का जो महल था, अंत:पुर के उद्यान सहित सुग्रीव के ठहरने के लिए दे दिया गया।

इसके बाद सुग्रीव ने चार स्वर्ण कलश चार वानर प्रमुखों के हाथ देकर आदेश दिया—"तुम लोगों को कल प्रात:काल तक चार समुद्रों के जल के साथ तैयार रहना होगा।"

इस पर जांबवान, हनुमान, वेगदर्शी तथा ऋषभ कलश लेकर चल पड़े और पांच सौ नदियों के जल के साथ चार समुद्रों के जल भी ले आये।

इसके अनंतर शास्त्र विधि से रामचन्द्र का राज्याभिषेक संपन्न हुआ। रामचन्द्रजी तथा सीताजी को रत्नखचित आसन पर बिठाया गया। मंत्रियों ने रामचन्द्रजी का अभिषेक किया। तदुपरांत ऋत्विजों, ब्राह्मणों, कन्याओं, नागरिकों तथा योद्धाओं ने एक के बाद एक करके श्रीरामचन्द्रजी का अभिषेक किया।

शत्रुघ्न ने श्रीराम के लए श्वेत छत्र हाथ में लिया, सुग्रीव तथा विभीषण ने चँवर डुलाये।

अपने राज्याभिषेक के अवसर पर रामचन्द्रजी ने ब्राह्मणों को बछड़ों सहित गायें, स्वर्ण तथा रेशमी वस्त्र दान दिये। उन्होंने सीताजी के हाथ एक मोतियों का हार देकर कहा—"तुम वानरों में जिस पर सब से अधिक वात्सल्य रखती हो, उसे यह हार प्रदान करो।" सीताजी ने तत्काल उसे हनुमान के हाथ दिया। तब रामचन्द्र ने अन्य वानर वीरों को पुरस्कार दिये।

राज्याभिषेक की समाप्ति पर विभीषण लंका को लौट गया। इसके बाद श्रीराम ने भरत को युवराजा बनाकर राज्य-शासन करना प्रारंभ किया।

चाँदबीबी

चाँदबीबी, अहमद नगर के सुलतान हुसेन निजाम शाह (१५५४-१५६५) की बेटी है। वह अनुपम रूपवती थी। उसका बचपन जनाने में ही बीता, फिर भी वह बचपन में ही विवेकशील तथा अनुपम साहसी के रूप में मशहूर हो गई।

शोलापूर नगर को लेकर अहमद नगर तथा बिजापूर के शासकों के बीच दुश्मनी पैदा हुई। दुश्मनी को बनाये रखना हितकर न मानकर अहमद नगर के सुलतान ने अपनी बेटी चाँदबीबी की शादी बिजापूर के सुलतान अली आदिल शाह के साथ कर दी और दहेज के रूप में शोलापूर प्रदान किया।

सुलतान आदिल शाह १५८० में क़त्ल कर दिया गया। उसके कोई संतान न थी, इस कारण उसके भाई का पुत्र इब्राहीम, जो उस वक्त नौ साल का था, सुलतान बना। चाँदबीबी उस बालक की अभिभाविका बनकर बिजापूर पर शासन करने लगी। उसके शासन की कुशलता की सबने मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

मगर धन के लोभ में पड़कर ख़ज़ाना तक को लूटने की सोचनेवाले सरदारों के लिए चाँदबीबी का शासन कंटक प्राय बना रहा । उन लोगों ने बालक सुलतान के साथ चाँदबीबी की भी हत्या करने का षड़यंत्र रचा । यह बात मालूम होने पर अपने संरक्षण में पलनेवाले सुलतान को साथ लेकर चाँदबीबी अपने मायके अहमद नगर चली गई ।

उस वक्त चाँदबीबी का भाई मुर्तजा अहमद नगर का सुलतान था । वह एक तरह का बावरा था । इसलिए वह अपने पुत्र हुसेन के द्वारा ही क़त्ल कर दिया गया । पर हुसेन अत्यंत ही क्रूर स्वभाव का था । इस कारण सरदारों ने हुसेन की हत्या करके उसके भतीजे को सुलतान घोषित किया । इन घटनाओं ने चाँदबीबी को विकल बनाया ।

अहमद नगर की इस अराजकता का पता दिल्ली के मुगल बादशाह अकबर को लग गया । अहमद नगर पर विजय पाने के लिए-इसी को अच्छा मौक़ा मानकर अकबर ने अहमद नगर पर भारी फ़ौज भेज दी । चाँदबीबी ने भांप लिया कि अहमद नगर की फ़ौज में कोई युद्ध-निपुण सेनापति नहीं है. इसलिए उसने स्वयं उस सेना का सेनापतित्व ग्रहण किया ।

मुगल सेना ने सर्व प्रथम अहमद नगर को घेरकर उसके बुर्जों को तोड़ने की योजना बनाई। चाँदबीबी ने बुर्जों की रक्षा करने के लिए मुगल फौज से लड़ाई शुरू की। फिर भी भारी मुगल फौज ने एक बंदूक़ में बारूद भरकर एक बुर्ज को उड़ा दिया। मगर तब तक शाम हो चुकी थी, इसलिए वे लोग क़िले में घुसने की हिम्मत न कर सके।

चाँदबीबी ने होनेवाले ख़तरे को पहचानकर रात-भर में क़िले में रहनेवाले मर्द और औरतों को इकट्ठा किया। सवेरा होने के पहले ही बुर्ज के गिरे हुए हिस्सों को पत्थरों से भरवा दिया। पुनः पहले की तरह बुर्ज को मज़बूत बनाकर सैनिकों का पहरा बिठा दिया।

मुगलों ने बुर्ज की जिन दीवारों को तोड़ दिया था, रातों रात उसकी मरम्मत कराने के साथ साथ क़िले की दीवारों पर तोप बिठा दिये और सूर्योदय के साथ हमला करनेवाले मुगल सैनिकों पर तोपों के गोले बरसाने के लिए तैयारी कर रखी दी थी।

सवेरा होते ही मुगल सैनिकों ने नये जोश के साथ क़िले पर धावा बोल दिया। थोड़ी देर तक भयंकर लड़ाई हुई। इस बीच जासूसों के द्वारा मुगल सेनापतियों को पता चला कि चाँदबीबी ने दुर्ग में स्थित सोना, चांदी व तांबे के सिक्कों के साथ गहनों को भी गलवाकर उन गोलों को तोपों में भरकर दुश्मन पर प्रयोग किया।

इस कारण एक और दफ़ा मुगलों का हमला विफल हो गया और साथ ही मुगल सेना को भारी क्षति पहुँची। अब दुर्ग पर अधिकार करना असंभव मानकर मुगल सेनापति ने चाँदबीबी के साथ समझौता कर लिया और तत्काल दिल्ली लौटकर चला गया।
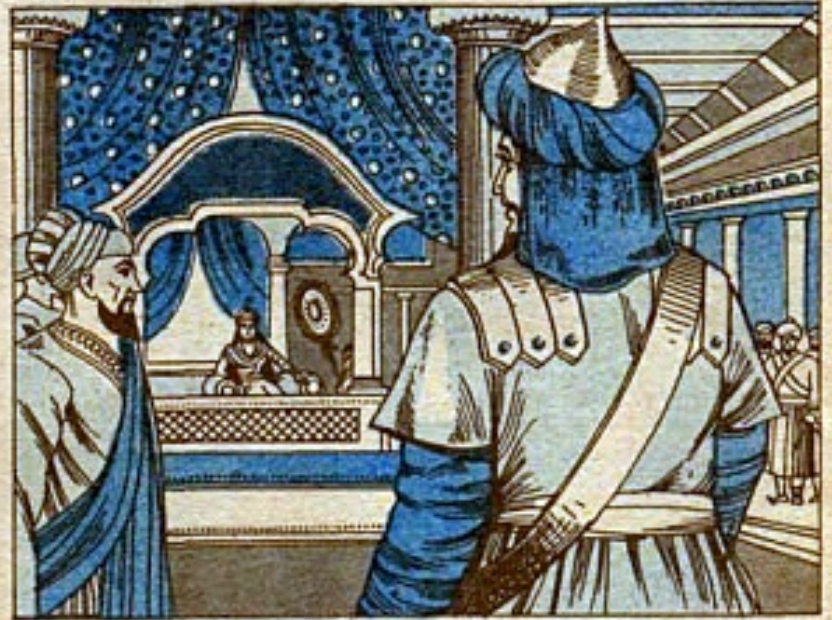
मुगलों ने इस लड़ाई के जरिये जान लिया कि चाँदबीबी के जीवित रहते अहमद नगर पर विजय प्राप्त करना नामुमक़िन है। थोड़े समय के बाद मुगलसेना ने बड़ी भारी तैयारी के साथ अहमद नगर के क़िले पर घेरा डाला। लेकिन इस बार लड़ाई के शुरू होते ही अपने भीतरी दुश्मनों के द्वारा चाँदबीबी की हत्या कराई गई। मगर तब तक चाँदबीबी इतिहास में अपना स्थान बना चुकी थी।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक मित्र ने अवंतीवर्मा के पास जाकर पूछा–"दोस्त, राजधानी में रहनेवाले मेरे भाई के नाम एक चिट्ठी लिखकर दोगे?"

"यह कौन बड़ी बात है? पर मैं हाल ही में राजधानी नहीं जा रहा हूँ।" अवंतीवर्मा ने जवाब दिया।

"महाशय, मैं तुम्हें राजधानी जाने को थोड़े ही कह रहा हूँ, मैं सिर्फ़ तुम से यही कह रहा हूँ कि वहाँ पर रहनेवाले मेरे भाई के नाम चिट्ठी लिखकर दो।" दोस्त ने कहा।

"यह बात तो मैं समझ गया, मगर मेरी लिखावट सिवाय मेरी समझ के और किसी की समझ में न आएगी।" अवंती ने जवाब दिया।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें–"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें दिसम्बर १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के फ़रवरी '७८ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

अक्तूबर मास की प्रतियोगिता का परिणाम: 'माया मिली न राम'

पुरस्कृत व्यक्ति: **बिलीपकुमार गोड़**, ११२, व्यावरा रोड, नरसिंहगढ़, राजगढ़ (म.प्र.)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ फ़रवरी १९७८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

S. Paramasivan

Sambhu Mukherjee

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो: मन का मैल यहाँ धुले!

द्वितीय फोटो: सफ़र लंबा ज़रा सो लें!!

प्रेषक: रामावतार अग्रवाल, द्वारा नागपुर वस्त्रालय, ठाकुरवाड़ी रोड़, कदमकुआँ, पटना

पुरस्कार की रु. २५राशि इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

वार्षिक शुल्क के लिए सम्पर्क करें : डौल्टन एजेंसीज़, चन्दामामा बिल्डिंग मद्रास- ६०००२६

यूकोबैंक देश के छोटे या बड़े, गरीब या अमीर, सभी लोगों को सुखी-स्वावलम्बी बनाने में सहायक है।

NP क्रॅकीज़
च्युइंग गम
हंसी-खुशी के पलों को NP क्रॅकीज़, ज़्यादा मज़ेदार बना देते हैं. दरअसल NP क्रॅकीज़ के ताज़े स्वाद का मज़ा आप बड़ी देर तक ले सकते हैं...चाहे काम का वक्त हो या खेलकूद का, आप दिन भर चुस्त बने रहते हैं.
NP क्रॅकीज़ कई मनपसंद स्वादों में मिलती हैं...सुपारी के स्वाद में भी. आप इसके सभी स्वादों को बहुत-बहुत पसंद करेंगे.
NP – एकमात्र च्युइंग गम, जिन पर है क्वालिटी का निशान आइ.एस.आइ.
ISI
जी ललचाया? बड़ा मज़ा आया! सुपारी के स्वाद सहित चार अपूर्व स्वादों में क्रॅकीज़
CRACKIES
दि नॅशनल प्रॉडक्ट्स, बंगलूर-५६० ००६
जवां दिल हरदम मौज मनाते NP क्रॅकीज़ के च्युइंग गम मज़े से खाते !
Dattaram NP-17J HIN

everest/929/PP-hn

पारले क्रॅकजॅक नाट्यम्

"धीन तन न धीन नमकीन नमकीन"

"ता तई तई ता मीठा मीठा"

मीठा नमकीन उत्तम स्वादम्
जय जय पारले जय क्रॅकजॅकम्

पारले
क्रॅकजॅक — मीठे नमकीन स्वादवाला एक बस एक बिस्किट

वर्ल्ड सिलेक्शन पारितोषिक विक्रेता